का बाना पहन लेता है। देश की रक्षा और शान्ति की स्थापना के लिये वह अपना सर्वस्व बलिदान कर देना चाहता है। बृहस्पति पंडित के चारों पुत्र वीर वेष में युद्ध-भूमि में आपसे साक्षात्कार करने को तैयार खड़े हैं। वैसे ये लोग शास्त्र-अध्ययन और ज्योतिष-ग्रन्थों की खोज में सलंग्न हैं।

भीमदेव : हम आयेंगे···राजदूत, अजयमेरु का वैभव नष्ट करने हमें आना ही पड़ेगा।

[**सहसा नेपथ्य में मेघ-गर्जन की ध्वनि होती है। सब ऊपर आकाश की ओर देखते हैं।**]

चन्द : जो गरजते हैं वे बरसते नहीं हैं। यह गर्जन आडम्बरपूर्ण है। मेघवर्षा के बादलों की घुमड़ दूसरी ही होती है। पाटन-धनी ! हमारे सम्राट ने यह भेंट भेजी है। सन्धि और युद्ध जो भी प्रिय हो।···

भीमदेव : भेंट, सन्धि, युद्ध ! वर्षाकाल सिर पर है। हम चाहते थे कि उस ओर वर्षा बीत जाने पर आते। अजयमेरु के शस्त्रागार में ही विजयादशमी का शस्त्र-पूजन करते।

चन्द : (हँसते हुए) चालुक्यराज ! वर्षा अभी दूर है। विजयादशमी बीते तो अभी एक पक्ष ही व्यतीत हुआ है। ग्रहण कीजिये यह भेंट।

[**चन्द सैनिक से लेकर एक कंचुक भेंट करता है**]

भीमदेव : (सरोष) कवि चन्द !

चन्द : इस समय राजदूत हूँ श्रीमान् ! सम्राट ने निवेदन किया है यदि युद्ध नहीं चाहते तो अपने घर लौट जायें। परमार श्री जयतसिंह और युवराज सलखसिंह को ससम्मान मुक्त कर उनका राज्य उन्हें लौटा दें। और यदि घर लौटना न चाहें तो··· (**दूसरी भेंट प्रस्तुत करते हुए**) यह लाल वर्ण की पगड़ी है।

(सदर्प) पाटनधनी को जो भी प्रिय हो उठा लें। हम भी कलह पसन्द नहीं करते ।

भीमदेव : (**सरोष**) राजदूत ! हम युद्ध-प्रिय हैं।

चन्द : तो श्रीमान्, यह लाल पगड़ी स्वीकार कीजिये । लीजिये !

भीमदेव : (**पगड़ी को स्पर्श कर**) हम तुम्हारे दम्भ को मिट्टी में मिला देंगे ।

[पगड़ी स्पर्श करने के पश्चात् जगदेव उसे अपने हाथों में ले लेता है। चन्द अपनी बगल में झूलते हुए शंख को निकालकर उच्च ध्वनि से फूंकते हैं।]

चन्द : हमारी सेनायें प्रतीक्षा कर रही हैं। रणभेरी का स्वर गूंज उठा है। हमारे सम्राट ने एक-दो पल जो भी उचित समझो, तैयार होने के लिये दिया है। अब हम चलते हैं।

भीमदेव : जगदेव भट्ट ! रण-भेरियाँ निनादित की जायें।

[सहसा एक रण-भेरी के पश्चात् दूसरी रण-भेरी बज उठती है। समस्त वातावरण युद्धमय हो जाता है।]

चन्द : (जाते-जाते) आपका स्वागत युद्ध-क्षेत्र में करेंगे गर्ज्जरेश्वर!

[यवनिका]

दृश्य : दो

स्थान : दृश्य चतुर्थ के अनुसार सम्राट पृथ्वीराज की राज-परिषद्।

समय : वही पूर्वाङ्क के दृश्य चतुर्थ के अनुसार।

[परिषद्-भवन उसी प्रकार सुसज्जित है। किन्तु सिंहासन के बाईं ओर ऊपरी भाग वाले प्रमदा-कक्ष में राजमाता कर्पूरदेवी तथा

राजमहिषी इच्छनकुमारी अपनी प्रमुख परिचारिकाओं के साथ दिखाई देती हैं। चमर-धारिणी सेविकाएं चमर डुला रही हैं।

सिंहासन के सम्मुख कुछ आसन विशेष बढ़ गये हैं। सम्राट सिंहासन पर विराजे हुए हैं। चमर डुलाये जा रहे हैं। राजगुरु राम-दास पर भी चमर डुलाये जा रहे हैं। नीचे के भाग में सामन्त-गण तथा मन्त्रि-परिषद् के सदस्य दिखाई पड़ते हैं। प्रथम पंक्ति में आँखों पर मणि-जटित एक पट्टी बाँधे कान्हदेव बैठे हैं। प्रतीत होता है किसी गम्भीर विषय पर चर्चा चल रही है।]

कान्हदेव : सम्राट पृथ्वीराज यशस्वी हुए हैं, साथ ही उन्होंने राज-नन्दिनी इच्छनकुमारी का पाणिग्रहण किया है। परिषद् में नृत्य-संगीत का आयोजन होना चाहिए था। विजयोत्सवों के पश्चात् हर्षोल्लास मनाकर परिषद् की क्रमागत परम्परा बनाये रखनी चाहिए। राजगुरु मौन क्यों हैं?

रामदास : चौहान वीर ने ठीक कहा है। पृथ्वीराज परिषद् का संचालन कर तो रहे हैं, किन्तु हम देख रहे हैं कि उनके हृदय में पीड़ा समाई हुई है। उस पीड़ा ने हर्षोल्लास मनाये जाने वाली परम्परा पर परदा डाल दिया है। कान्हदेव, वत्स पृथ्वीराज की मुखाकृति को यदि आप देख पाते।

पृथ्वीराज : काका जी, हमने चालुक्यों पर विजय अवश्य पाई है, आपकी कृपाण ने जो कुहराम मचाया था उसे हमने अपनी आँखों से देखा भी था। चौहान-कीर्ति की प्रतिष्ठा स्थिर रखने में आपने कितना साहस और उत्साह दिखाया, हम ऋणी हैं, काका जी! आपके ऋणी हैं, हम आपकी इच्छा और परिषद् की परम्पराएँ भंग करना नहीं चाहते, किन्तु······किन्तु हमें दुःख है कि जिन आँखों ने युद्ध के वीभत्स दृश्य देखे वे आँखें हर्ष और

उल्लास नहीं देख सकेंगी। युद्ध की विभीषिका, जो नेत्रों में भर जाती है, उसे दूर करने के लिए ही उसके बाद सम्भवतः नृत्य-संगीत की निर्झरिणी बहाई जाती थी। (भावावेश) किन्तु जब हमारे काका, चौहान वीरों के अग्रज उस दृश्य को देख नहीं सकते तो परिषद्‌जनों ने यही उचित समझा है कि पृथ्वीराज की परिषद् में नृत्य-संगीत न हो। कविताएँ भी हों तो वीर रस की। चर्चा हो तो वीरत्व की, मंत्रणा हो तो राष्ट्र-कल्याण की—जनता की समृद्धि की। काका जी, परिषद् के कुछ प्रमुख जनों ने, हमारे साथी मित्र कविराज चन्द ने भी हमें यही परामर्श दिया है।

रामदास : कान्हदेव ! परिषद् आपकी सेवाओं को भुला नहीं सकती।

कान्हदेव : परिषद् की भावना में मेरे प्रति सौहार्द-प्रदर्शन की जो भावना मिल रही है उसे चाहे मेरे नेत्र न देख सकें किन्तु हृदय के नेत्र तो देख रहे हैं। मुझे दुःख न होगा यदि परिषद् की इस परम्परा को स्थिर रखा गया।

चन्द : (खड़े होकर) चौहान-वीर-परिषद् को आपकी भावना पर गर्व है, किन्तु आप विवश न करें सम्राट को, हमारा सबका यही निवेदन है। जब आपका आदेश होगा तो हम उसे टाल कैसे सकेंगे ! हम पुनः अनुरोध करते हैं कि हम उस महत्त्वपूर्ण समस्या पर विचार करें जो एक विशिष्ट महत्त्व रखती है।

कान्हदेव : (सचिन्त) किस समस्या की ओर संकेत है कविराज ?

चन्द : यह तो किसी से छिपा नहीं है कि बर्बर गोर भारत भूमि में छा जाने का स्वप्न देख रहे हैं। गुप्तचर हमारे देश में पहुँचाये जा रहे हैं। इतना ही नहीं, उन लोगों ने माया का लोभ दिखाकर हम भारतीयों को भी फोड़ना आरम्भ कर दिया है।

तोमरेश्वर की सीमा से संलग्न भूमि में कुछ ऐसे भारतीय हैं जो जघन्य कार्य में योग देने लगे हैं।

कान्हदेव : कौन हैं वे भारतद्रोही ?

चन्द : सुना है, माधवभट्ट गज़नी से आया हुआ है। दिल्ली में कई लोगों से मिलता-जुलता रहता है। माधवभट्ट शाह-बुद्दीन मोहम्मद ग़ोरी का कोषाध्यक्ष है।

रामदास : उस पर कड़ी निगाह रखी जानी चाहिये।

चन्द : किन्तु जब तक तोमरेश्वर इस ओर सतर्क नहीं हो जाते हम करें भी क्या ? (कुछ स्वर्ण-मुद्राएँ दिखाते हुए) ये मुद्राएँ ग़ोर-राज्य की हैं। दिल्ली के एक धनिक स्वर्णकार के यहाँ से मिली हैं।

[बैठते हैं]

पृथ्वीराज : तोमरेश्वर अनंगपाल देव से मिलकर इस समस्या का समाधान करना अनिवार्य है। आर्य-भूमि पर संकट के बादल बढ़ते जा रहे हैं।

चामुण्डराय : (खड़े होकर) और उन गुप्तचरों का क्या किया जाना है ?

कान्हदेव : किया क्या जाय ! बन्दीगृह की दीवारें समर्थ हैं। वहीं बन्द कर देना ठीक रहेगा।

[प्रतिहारी का प्रवेश]

प्रतिहारी : (नतमस्तक) आर्य्यसम्राट की जय हो।

कैमास: क्या है प्रतिहारी ?

प्रतिहारी : (नतमस्तक) सैनिक कुछ गुप्तचरों को पकड़कर लाये हैं।

चामुण्डराय : गुप्तचर ! कितने आ गये हैं ? सम्राट, इनके रोक-थाम की उचित व्यवस्था होनी चाहिए।

पृथ्वीराज : हम भी तो देखें ! यहाँ भेज दो।

[प्रतिहारी का नतमस्तक प्रस्थान]

कान्हदेव : लगभग डेढ़ शताब्दी बीती है जिसमें आर्य्यावर्त ने कुछ शान्ति का श्वास लिया था, किन्तु अब सन्देह है श्रीमान् !

पृथ्वीराज : उनके घर में ही आग लगी हुई थी, दूसरी ओर ध्यान जाता भी कैसे, पहले उसे बुझाना था। शहाबुद्दीन गोरी समर्थ शासक है, उसने अराजकता पर अधिकार कर लिया। इस्लाम की दुहाई देकर वह शक्ति-सम्पन्न हो गया है। 'इस्लाम संकट में है' सुनते ही धर्मान्ध मुसलमान एकत्रित हो जाते हैं, चर्चा करते हैं और मरने-मारने को कटिबद्ध हो जाते हैं। धर्म-मदान्धता भरी हुई है इनमें।

[सैनिक एक स्त्री और एक पुरुष को लाते हैं। सम्राट को तथा परिषद् को देख-देखकर—तीन बार झुक-झुक कर आगे बढ़ते हैं, हाथ नतमस्तक की ओर कर करके]

कैमास : **(सदर्प)** तुम कौन हो ? कहाँ से आए हो ? तुम्हारा नाम ?

हुसैनखाँ : हुजूर, खादिम को हुसैनखाँ कहते हैं। शाहे-गोर का भाई हूँ।

कैमास : **(साश्चर्य, खड़े होकर)** गोर के राजा के भाई !

हुसैनखाँ : हाँ, सरकार, हम शहँशाहे आलम, आफताब-ए-भारत (भारत के सूर्य) की मदद लेने आए हैं।

कैमास : **(सविस्मय)** आर्य्य-सम्राट की सहायता ? किन्तु हमें पता चला है कि तुम लोग भेदिए हो। यहाँ के समाचार अपने राजा के पास भेजते रहते हो।

हुसैनखाँ : (सविनय) सरासर गलत है। हम तो आपकी पनाह (शरण) चाहते हैं। हमने आपकी दरिया-दिली (उदारता) की तारीफ सुनी थी। महाराज, हम पनाह चाहते हैं। हमें शहाबुद्दीन गोरी से खतरा है। उसके कुछ भेदिए हमें तलाश कर रहे हैं।

छिपते-छिपाते आपके शहर में आ गए थे। सुबह के वक्त ही हमें पकड़ लिया गया।

पृथ्वीराज : कविराज चन्द इनकी भाषा भली भाँति जानते हैं। इनसे स्पष्ट मालूम करें ये लोग संकट-ग्रस्त हैं अथवा छल-प्रपंच खेलना चाहते हैं।

चन्द : (खड़े होकर) हुसैनखाँ, हम साफ-साफ जानना चाहते हैं कि तुम कौन हो, क्या हो ?

हुसैनखाँ : हमने ज़रा भर गलत नहीं कहा। हम शहँशाहे ग़ोर के छोटे भाई हैं।

चन्द : लेकिन यहाँ आने का मकसद (प्रयोजन) सम्राट जानना चाहते हैं।

हुसैनखाँ : आलीजाह ! देखिये। (दिखाकर) ये बेशकीमती हीरे जवाहरात, ये तोहफे हम हिन्दुस्तान के शहंशाह की भेंट के लिए लाये हैं। हमारे साथ हमारे काबिले-इतमीनान (विश्वस्त) एक हजार सिपाही भी हैं जो अपनी जवाँमर्दी और ईंट से ईंट बजा देने में अपना सानी नहीं रखते। उन सबको हम आपकी पनाह में छोड़ते हैं।

चन्द : मगर खाँ साहब, यह नहीं बताया कि आप अपने भाई के खिलाफ क्यों बग़ावत कर रहे हैं ? सच-सच कहें।

हुसैनखाँ : सच-सच अर्ज कर रहा हूँ बन्दानवाज (सेवक पर कृपा करने वाला) मेरे साथ नाचने वाली हैं। ये नाचने में माहिर (प्रवीण) हैं और···और ये हम से मुहब्बत (प्रेम) करती हैं। यही गुनाह (अपराध) है। शहंशाह की नीयत खराब हो गई है। वह हमारी महबूबा (प्रिया) को अपने हरम की लौंडी बनाकर रखना चाहते थे। यह इनकी भी मर्जी के खिलाफ

पड़ा। हम बचते-बचाते चले आये हैं। हम पनाह चाहते हैं, पनाह ! समराट (सम्राट) । अगर हमारे खून का एक-एक कतरा (बूंद) चाहेंगे तो हम खुशी से भला कर देंगे (वे देंगे) ।

चन्द : हमारे सम्राट् को भरोसा कैसे हो ? कुछ इतमीनान दिला सको तो···

हुसैनखाँ : इतमीनान ! (जोर देकर) इतमीनान !! जो हुजूर फरमावें।

पृथ्वीराज : मीर हुसैनखाँ हमारे शरणागत हैं। हमारी मानवता, हमारा शिष्टाचार यह नहीं कहता कि हम उन पर भरोसा न करें।

कान्हदेव : क्षत्रिय अपने शरणागत की रक्षा करते हैं किन्तु फिर भी हमें शंका है···कहीं शत्रु की चाल न हो···घर बैठ नीति का आश्रय न लिया जा रहा हो कहीं !

[**हुसैनखाँ और नर्तकी चित्ररेखा विस्मय-पूर्वक देखते हैं, उनकी समझ में कुछ नहीं आता।**]

चन्द : शिष्टाचार निबाहना ही पड़ता है, चौहान-वीर !

पृथ्वीराज : कविराज चन्द ! काका जी का आशंका की दृष्टि से देखना उचित ही है। उनकी आशंका में हमारी कल्याण-भावना छिपी है। आर्य्यभूमि के प्रति प्रगाढ़ भक्ति है।

चन्द : यथार्थ है, श्रीमान् ! मीर हुसैनखाँ हमारी शरण में आये हैं और शरणागत की रक्षा करना हमारा धर्म है, कर्त्तव्य है। शरणागत को आश्रय देना भारतीय परम्परा है। काकाजी, यह कैसे सम्भव हो सकता है कि कोई शरण माँगे और हम उसे शरण न दें।

कान्हदेव : कविराज ! शरणागत की रक्षा अपने प्राणों की आहुति देकर भी करनी चाहिए। यह हमारा स्वाभाविक गुण भी है

किन्तु यहाँ परिस्थितियाँ भिन्न हैं। यहाँ हम उन्हीं लोगों को शरण देना चाहते हैं जो आर्य्य-भूमि के शत्रु हैं।

पृथ्वीराज : शरणागत कौन है यह नहीं देखना है काका जी! देखना यह है कि शरण कौन दे सकता है। चौहानों की शक्ति प्रबल है, तभी तो शरण माँगी जा रही है। साथ ही शरणार्थी यह भी देखता है कि यहाँ उसके साथ न्याय होगा, उसकी रक्षा का दायित्व शरण देने वाले में पर्याप्त है। इन सब बातों को दृष्टि में रखकर ही वह अपना निश्चय दृढ़ करता है। स्वाभाविक है कि शहाबुद्दीन ग़ोरी ने मीर हुसैनखाँ की प्रेयसी को लेने की इच्छा प्रगट की हो।

चन्द : यथार्थ है श्रीमान्, फिर मीरखाँ और उनके एक सहस्र सैनिक हमारी अतुल शक्ति का बिगाड़ भी क्या लेंगे। सावधानी तो प्रत्येक क्षण बरतनी होती है, असावधानी से अपने को भी धोखा दे जाते हैं।

हुसैनखाँ : हमें मौका दिया जाय समराट (सम्राट)! यदि ग़ोरी ने आपकी ओर आँख उठाई तो हम उसकी आँख फोड़ देंगे, यदि हाथ बढ़ाया तो उसका हाथ काटकर फेंक देंगे। हमारे दिल में उसके लिए नफ़रत है। प्यार जब नफ़रत में बदल जाता है तो उसके सामने अपना-पराया कुछ नहीं होता। शाहे ग़ोर ने हमारे अमनो-चैन को बरबाद किया है, हम उसके अमनो-चैन को बरबाद कर देंगे।

चन्द : मीर हुसैनखाँ, माधवभट्ट को जानते हो?

हुसैनखाँ : जानता हूँ सरकार!

पृथ्वीराज : सुना है वह हमारे देश में आता-जाता रहता है।

हुसैनखाँ : दुरुस्त है, आलमपनाह, दुरुस्त है, उसके कई साथी हैं। वह

हिन्दोस्तान में जवाहारात और सोने की तिजारत करता है। उनका गिरोह चोरी-छिपे काम करता है। इस तरह के काम करने वाले ऐसे कई गिरोह हैं उसके।

चन्द : (दिखाते हुए) इन सिक्कों को पहचानते हो ?

हुसैनखाँ : सिक्के ! (देखकर) ये सिक्के नकली हैं। पर हैं असली के मानिन्द। आलम-पनाह, माधवभट्ट को एक काम सौंप रखा है शाहे ग़ोर ने।

पृथ्वीराज : बता सकोगे ?

हुसैनखाँ : समराट (सम्राट), शाहे ग़ोर ने कुछ सिक्के ढालने का काम उसे दे रखा है। माधवभट्ट कुछ सिक्के ऐसे बनाता है जिन पर एक तरफ शाहे ग़ोर का नाम खुदा रहता है और दूसरी तरफ उस मुल्क और राजे-नवाब का जिसे उसने हमला करके जीत लिया हो।

चन्द : मुल्क जीतने पर ही उस मुल्क का नाम खुदवा दिया जाता है ?

हुसैनखाँ : हुजूर ! इसके अलावा अगर कोई मुल्क हार भी जाता है तो भी उस मुल्क के राजा का नाम खुदवा देता है। इस तरह अपनी फ़तह का ढिंढोरा पीटता है। दूसरी बात, ऐसे सिक्के ग़ोर के बाजारों में बिकते भी ऊँची कीमत पर हैं। ग़ोर के लोग बादशाह की फ़तह की निशानी समझकर मोल लेते रहते हैं।

पृथ्वीराज : फिर ये सिक्के दिल्ली तक कैसे आते हैं ?

हुसैनखाँ : जहाँपनाह, ये सिक्के वे होते हैं जिनमें सोना ज्यादा होता है। माधवभट्ट उन्हें अपने गिरोह के आदमियों के हाथों हिन्दोस्तान भेज देता है और उनकी कीमत उठाता है। यह काम सल्तनत से छिपाकर करता है।

चन्द : मुहम्मद ग़ोरी को मालूम नहीं होता ?

हुसैनखाँ : शहंशाह, हिन्दोस्तान की फ़तह हो। माधवभट्ट की कार-

गुजारियाँ कहाँ तक बताऊँ ! वह शाहे ग़ोर की आँखों में धूल झोंकता रहता है। शाहे ग़ोर उस पर यकीन करते हैं। वहीं का वाशिंदा (निवासी) है।

पृथ्वीराज : यह बड़ा रहस्यपूर्ण काम है। हमारे देश में सोना कैसे लाया जाता है ? चोरी से ! किन्तु हम विवश हैं, जब तक आर्य्य-भूमि एक सूत्र में नहीं बँध जाती विदेशियों के कुचक्रों से छुटकारा पाना सरल नहीं है। चन्द, हम समझते हैं यह दम्पति विश्वस-नीय है। आश्रय देने में हानि नहीं है।

[हुसैनखाँ इधर-उधर देखकर चन्द की ओर देखता है]

चन्द : आर्य्य-सम्राट ने तुम्हें पनाह देना मंजूर कर लिया है।

हुसैनखाँ : (प्रसन्न होकर) शहँशाहे हिन्दोस्तान जिन्दाबाद ! आरिया समराट (आर्य्य-सम्राट) जिन्दाबाद !

चन्द : आपके रहने के लिये एक अलग महल का इन्तजाम किया जा रहा है।

हुसैनखाँ : (झुककर) शुक्रिया, भारत के लोग सचमुच दरिया-दिल होते हैं। (अपनी प्रेयसी से) चलो बेगम, अब हम अमनो-चैन की जिन्दगी इस सरसब्ज जमीन पर बसर करेंगे। शाहे ग़ोर का यहाँ खतरा नहीं।

[दोनों प्रसन्न होकर बाहर जाते हैं। कैमास तथा चन्द उनका साथ देते हैं। तदनन्तर परिषद् भंग होती है।]

[यवनिका]

दृश्य : तीन

स्थान : दिल्ली-नरेश तोमरेश्वर श्री अनंगपाल देव की राज-परिषद् ।
समय : मध्याह्नोपरान्त ।

[परिषद्-भवन की साज-सज्जा साधारणतः अजयमेरु-परिषद् के समान ही है। बहुत थोड़ा ही अन्तर है। तोमराधीश सिंहासन पर तथा अमात्यगण उनके सामने अपने-अपने आसनों पर विराजमान हैं। मंत्रणा चल रही है।]

अनंगपाल : अमात्यवर ! हमारी अवस्था अब पर्याप्त ढल चुकी है। जीवन का सन्ध्याकाल आ पहुँचा है। अब हम शासन-व्यवस्था से विश्रान्ति लेना चाहते हैं।

प्रधान अमात्य : (सविनय उठकर) राजेन्द्र-शिरोमणि ! निश्चय ही हमारे लिये चिन्ता का विषय है। युवराज-पद रिक्त ही है।

[बैठते हैं]

चन्द्रशेखर : नृपेन्द्र ! आर्य्य-भूमि इस समय संकट-ग्रस्त है। राजकाज से विश्राम लेना इस समय उचित न होगा।

अनंगपाल : गुरुवर्य का कथन सत्य है, हम स्वीकार करते हैं। किन्तु साथ ही यह भी अनुभव कर रहे हैं कि दिल्ली का शासन-सूत्र संभालने के लिये समर्थ हाथों की आवश्यकता है।

चन्द्रशेखर : तोमरेश्वर ने दिल्लीराज्य की कीर्ति स्थापित की है। उसे चौहान-नृपति सोमेश्वरराज की माण्डलिकता से मुक्त कराया है।

अनंगपाल : (साधारण हँसकर) चौहान की माण्डलिकता बनी रहती तो सम्भव है आज हमें उत्तराधिकार की समस्या पर विचार न करना पड़ता। स्वर्गीय सोमेश्वरराज से पुत्री कमलावती का विवाह इसीलिये किया था कि दोनों राजवंशों में घनिष्ठता बढ़

जाय। दोनों राज्यों की कटु भावनाएँ नष्ट हो जायँ। तोमर और चौहान एक दूसरे के निकट आ जायँ।····और हुआ भी ऐसा ही। सोमेश्वरराज ने हमें माण्डलिकता से मुक्त कर हमारे सम्मान को बढ़ाया था। सम्राट पृथ्वीराज भी उसी परम्परा को अपनाये हुए हैं।

अमात्यराज : (सविनय) किन्तु····(खड़े होते हुए) कान्यकुब्जेश्वर चाहते हैं कि दिल्ली का आधिपत्य उनके पक्ष में कर दिया जाय।

[बैठते हैं]

अनंगपाल : कान्यकुब्जेश्वर जयचन्द समर्थ और वीर तो हैं, किन्तु हमें पृथ्वीराज से अधिक स्नेह है।

चन्द्रशेखर : (सविस्मय) राजेन्द्र ! कान्यकुब्जेश्वर ने आपकी पुत्री की कुक्ष से जन्म लिया है।

अनंगपाल : ठीक है गुरुवर्य ! किन्तु हमने कर्पूरदेवी को भी कमलावती के सदृश माना है। उनके पिता चेदिराज अचलराज की मित्रता हमें प्रिय रही है। उन्होंने भी कमला को अपनी पुत्री से बढ़कर माना है। उसका मान-सम्मान किया है। फिर हमारा भी कर्तव्य हो जाता है कि हम पृथ्वीराज को वही पद दें जो जयचन्द को दिया गया है। हमारी दृष्टि में जयचन्द और पृथ्वीराज समान हैं। गुरुदेव, हमें आशीर्वाद दें, हम अपना निर्णय उचित कर सकें।

चन्द्रशेखर : नृपेन्द्र, हमारी मंगल-कामनाएँ हैं। हमें आशंका है, यदि पृथ्वीराज को उत्तराधिकार मिला तो 'कान्यकुब्जेश्वर का ईर्ष्यानल भड़क उठेगा। उनमें उदार भावना की कमी है और राज्यलोलुपता कुछ अधिक। इसी हेतु हमने सलाह दी है कि राठौर और चौहानों में संघर्ष और मनोमालिन्य न उठें।

अनंगपाल : परामर्श उचित ही है, राजगुरु ने भविष्य की कल्पना कर ली है। ईश्वर न करे वह होकर रहे, फिर भी होनहार को कौन टाल सका है ! विधि का विधान कौन मेट सका है !

चन्द्रशेखर : (**दीर्घ निश्वास**) विधि का विधान ! सत्य है मानव की इच्छाएँ कब फलवती रही हैं। एक न एक बाधा उपस्थित हो ही जाती है।

अनंगपाल : हम अनुभव कर रहे हैं, आचार्य का झुकाव कान्यकुब्ज की ओर है।

चन्द्रशेखर : ऐसा नहीं है श्रीमान् ! गृह-कलह का बीजारोपण न हो जाय कहीं इसलिये ! राज्य-लिप्सा, पद-वैभव का मोह किसे नहीं होता नृपवर ! मानवीय दुर्बलताओं को मेरे नेत्रों ने पढ़ लिया है राजेन्द्र ! विवेक-शील मनुष्य कितने हैं इस संसार में ! धन-वैभव विवेक पर भी तो आवरण डाल देता है।

अनंगपाल : यथार्थ कहा आचार्य ! किन्तु वसुंधरा पर शासन किसका स्थिर रहा है ? आज है कल नहीं, फिर उसका मोह क्यों ?

चन्द्रशेखर : आर्य्यश्रेष्ठ ने सुन्दर विचार प्रकट किये हैं। वसुन्धरा पर शासन किसका टिका है ! वसुन्धरा पर शासन स्थिर रहा है वीरों का ! वीरभोग्या रही है यह।

अनंगपाल : वह वीरता पृथ्वीराज में अधिक दृष्टिगोचर रही है। उनकी भावनायें महान् हैं, लोक-कल्याणकारी हैं। हम सुन चुके हैं कि वे भारतीय राज्यों को एक सूत्र में बाँधना चाहते हैं। समस्त बिखरी शक्तियों को एकत्रित कर एक सुदृढ़ संगठन बनाना चाहते हैं।

चन्द्रशेखर : यदि कहा जाय कि यह उनकी साम्राज्य-भावना है तो अनुचित न होगा।

प्रधान अमात्य : (**सविनय**) अपराध क्षमा हो आचार्य ! सुना जा रहा

है, कान्यकुब्जेश्वर भी राजसूय यज्ञ की तैयारी में लगे हुए हैं।

चन्द्रशेखर : सुना हमने भी है अमात्यवर ! हम ऐसे यज्ञों को इस कलि-काल में अनुचित ही समझते हैं। राजसूय यज्ञ यदि कान्यकुब्जेश्वर ने किया भी तो सफल न होगा। उसका प्रतिफल भयंकर होगा। राजसूय यज्ञ गृह-कलह, आन्तरिक उपद्रव...

प्रधान अमात्य : (सविनय) राजगुरु की कल्पना में राजसूय का परिणाम गृह-कलह भी हो सकता है।

चन्द्रशेखर : हो सकता है, किन्तु इसे भावी ही बतलायेगी। हमने भी एक बार राठौर-नरेश का ध्यान आकर्षित किया था, किन्तु हमें लगा कि वे अपने निर्णय पर दृढ़ हैं।

प्रधान अमात्य : (सविनय) तब तो यह हठ है, गुरुदेव !

चन्द्रशेखर : राजहठ से अनेक अमंगल होते आये हैं। उसी अमंगल की कल्पना से हमने अपना मत रखा था, किन्तु इसका अभिप्राय यह न लें कि हम सम्राट पृथ्वीराज को तोमर-राज्य का उत्तराधिकार देने का विरोध कर रहे हैं। गृह-कलह से गृह-शान्ति का महत्त्व अधिक है।

अनंगपाल : हम देख रहे हैं कि प्रत्येक समर्थ राजेश्वर में सम्राट बनने की कामना है। उधर देखिये गुर्जरेश्वर ने स्वप्न देखा, इधर कान्यकुब्जेश्वर देख रहे हैं। इस मोह से पृथ्वीराज भी वंचित नहीं हैं। किन्तु भावनाएँ सबकी पृथक्-पृथक् हैं। चौहानों की भावना में राष्ट्रीयता है, देशभक्ति है जबकि दूसरे राजे अपने-अपने स्वार्थों में निरत हैं। विदेशी सत्ता को नष्ट करने में सचमुच चौहान-नृपतियों ने प्रबल योग दिया है। हम पृथ्वीराज को ही इसके उपयुक्त मानते हैं। दिल्ली पर अधिकार वस्तुतः चौहानों का ही है। हमारे पूर्वज शाकम्भरी की प्रभुसत्ता स्वीकार कर ही

चुके थे। हमने युद्धक्षेत्र में वीरता-प्रदर्शन कर दिल्ली को सार्व-
भौम सत्ता स्वीकार कराई नहीं। पारस्परिक सम्बन्धों के आधार
पर ही तो…

प्रधान अमात्य : **(सविनय)** साथ ही राज-महिषी की भी इच्छा थी।

चन्द्रशेखर : राजमहिषी की इच्छा ! स्वर्गीय राजमहिषी की इच्छा
यदि पृथ्वीराज के पक्ष में थी तो हम भी अपनी स्वीकृति देंगे।
राजेन्द्र पृथ्वीराज से हमें व्यक्तिगत द्वेष नहीं है। आर्यभूमि की
यही मंगल-कामना प्रमुख थी कि आर्य्यभूमि में शान्ति बनी रहे।

(प्रतिहारी का प्रवेश)

प्रतिहारी : **(नतमस्तक)** तोमरेश्वर की जय हो ! शाकम्भर नाथ पधारे
हैं।

अनंगपाल : **(सविनय)** पृथ्वीराज ! गुरुदेव, पृथ्वीराज पधारे हैं !
जाओ अमात्यवर, स्वागत करो।

चन्द्रशेखर : **(जिज्ञासापूर्वक)** आमंत्रित किया गया था अथवा…

प्रधान अमात्य : नहीं गुरुवर्य ! स्वतः पधारे हैं।

(प्रधान अमात्य के साथ कुछ अन्य परिषद्-जनों का प्रस्थान)

चन्द्रशेखर : शुभ हुआ। प्रतीत होता है ईश्वर हमारे पक्ष में है।
उत्तराधिकार के प्रश्न पर उनकी भावना भी स्पष्ट हो जायगी।

(**नेपथ्य में :** सम्राट पृथ्वीराज की जय हो ! आर्य सम्राट की जय हो !
तोमरेश्वर की जय हो !)

**[धीरे-धीरे जय-निनाद गंभीर होता है। पृथ्वीराज के
साथ उनकी परिषद् के कुछ प्रमुख व्यक्ति, चन्द,
कैमास, चामुण्डराय, मीर हुसैन तथा उनसे कुछ
पीछे तोमर-परिषद् के सम्मिलित प्रवेश करते हैं।]**

पृथ्वीराज : गुरुजनों को पृथ्वीराज का अभिवादन स्वीकार हो।

चन्द्रशेखर }
अनंगपाल } :(**प्रसन्न मुद्रा में**) यश-वैभव, राज्यलक्ष्मी का वरण करो वत्स !

(**पुनः तोमरपरिषद् के सदस्य जयनाद करते हैं**)

पृथ्वीराज : हमने सोचा था नानाजी विश्राम-कक्ष में होंगे, किन्तु मालूम हुआ कि परिषद् में व्यस्त हैं। कोई आवश्यक मंत्रणा चल रही प्रतीत होती है। अच्छा ही हुआ, हम भी कुछ महत्त्वपूर्ण सुझाव लेकर उपस्थित हुए हैं।

चन्द्रशेखर : सुन्दर योग बना है। वत्स पृथ्वीराज ! तोमरेश्वर के भावी उत्तराधिकार का प्रश्न सामने है, उसी पर विचार हो रहा था।

पृथ्वीराज : भावी उत्तराधिकार ?

अनंगपाल : बैठो वत्स ! बैठिये कैमास, चामुण्डराय और (**सहर्ष**) कविराज। अच्छे अवसर पर पधारे, बैठिये।

(**सब यथास्थान बैठते हैं**)

वत्स पृथ्वीराज, हमारा जीवन-भास्कर अस्ताचलगामी हो रहा है, अतः अब राज-काज में रुचि नहीं रही है।

चन्द : तोमरेश्वर वानप्रस्थ लेना चाहते हैं ? (**हंसते हैं**)

अनंगपाल : कविराज ने मन के भाव पढ़ लिये हैं। कृत-संकल्प हूँ।

पृथ्वीराज : नानाजी, हम तो आपको सावधान करने आये थे।

चन्द्रशेखर : क्या आपके कानों में भी भनक पड़ गई थी ?

पृथ्वीराज : गुरुवर्य ! भनक कैसी ! भनक सुन-सुनकर तो हमारे कान पक गये हैं गुरुवर्य ! दिल्ली के समीप म्लेच्छ गुप्तचरों का जाल बिछ गया है। गोर का कोषाध्यक्ष सतत प्रयत्न कर रहा है आपके यहाँ के धनिकों को उभारने का। माधव भट्ट के गुप्तचर

तस्कर-व्यापार में संलग्न हैं। यहाँ के समाचार गतिविधियों से शत्रुदेश को अवगत कर रहे हैं।

चामुण्डराय : (खड़े होकर) तोमरेश्वर शासन-व्यवस्था में सतर्क रहें। शत्रु हमारा द्वार खटखटा रहा है।

अनंगपाल : सुना हमने भी था चामुण्डराय! इस हेतु भी हम चाहते हैं राज्यभार समर्थ कन्धों पर डाल दिया जाय। इस समय देश को समर्थ नवयुवकों की आवश्यकता है, नवीन रक्त में कार्य-क्षमता अधिक होती है।

पृथ्वीराज : बात तो उचित है, पुनश्च इतना अवश्य कहूँगा कि अनुभव-सिद्धि तो परिपक्व अवस्था पर ही हो पाती है।

कैमास : उत्तराधिकार का प्रश्न बाद में निश्चित करें, श्रीमान्! आपके राज्य में जो घटनाएँ घट रही हैं उन पर ध्यान देने की आवश्यकता है। यदि समय रहते न सावधान हुए तो सम्भव है हमें बड़े संकट का सामना करना पड़ जाय। शत्रु का जाल अपनी गहरी नींव न जमा ले। दिल्ली नगर में माधव भट्ट प्रभृति पर गहरी दृष्टि रखी जाय।

अनंगपाल : अमात्य-शिरोमणि का सुझाव उचित ही है। हम दोनों समस्याएँ एक साथ निबटाना उचित समझेंगे।

चन्द्रशेखर : तोमरेश्वर बहुत ही व्यग्र हैं, उत्तराधिकारी के लिये।

पृथ्वीराज : तोमर वंश का कोई युवक निश्चित कर ही चुके होंगे। हम सहयोग देने का पूरा आश्वासन देते हैं।

चन्द्रशेखर : तोमर राज ने निश्चय कर लिया है वत्स! श्रीमान् अनंगपाल देव का निर्णय घोषित किया जाना शेष है।

पृथ्वीराज : तब तो शुभ हुआ। शुभ निश्चय में विलम्ब क्यों?

अनंगपाल : वत्स पृथ्वीराज की सम्मति लेना उचित था। इसलिये

विलम्ब उचित था।

पृथ्वीराज : हमारी स्वीकृति-सम्मति नाना जी के निर्णय से भिन्न नहीं होगी।

चन्द्रशेखर : वत्स पृथ्वीराज, उत्तराधिकार का प्रश्न महत्त्वपूर्ण है।

पृथ्वीराज : हम स्वीकार करते हैं आचार्य। हमारी राय थी कि यदि तोमर कुल में कोई योग्य व्यक्ति न मिले तो यह भार कान्य-कुब्जेश्वर को सौंप दिया जाय।

अनंगपाल : (**खिन्नतापूर्वक**) पृथ्वीराज! कैसी थोटी कल्पना! आर्य्यावर्त्त की नींव हिलने जा रही है। तब उसे योग्य शासक, त्यागी वीर, रणकुशल योद्धा की आवश्यकता है। जिसने आर्य्यभूमि को म्लेच्छ आततायियों से संघर्ष करने का बीड़ा उठाया हो उसी नर-पुंगव को हम अपना उत्तराधिकारी बनायेंगे।

चन्द्रशेखर : और वे समस्त गुण हम लोगों ने पृथ्वीराज में पाये हैं।

अनंगपाल : स्वीकार कर चिन्तामुक्त करें वत्स!

[**चन्द, कैमास, चामुण्डराय तथा तोमर-परिषद् के सब सम्राट पृथ्वीराज का जय-निनाद करते हैं।**]

पृथ्वीराज : ठहरिये! सभ्य वृन्द! ठहरिये! पृथ्वीराज इसलिए नहीं उपस्थित हुआ है कि वह आपका राज्य चौहान राज्य में मिला ले। वह तो अपना कर्त्तव्य पूरा करना चाहता था। हम आपके राज्य की सीमा में कुछ चौहान शिविर स्थापित करना चाहते थे ताकि संकट के समय हमें अपनी असावधानी पर पछताना न पड़े।

अनंगपाल : राजगुरु, अमात्यवर तथा हमारी परिषद् आपको यह सभी राज्यसत्ता सौंपने का निर्णय कर चुके हैं। हम तोमर वंश के स्वार्थ और उसके उज्ज्वल भविष्य की कामना नहीं कर रहे। हम चाहते हैं कि संकट के समय चौहान सम्राट को दिल्ली की आवश्

श्यकता है, यह आर्य्यावर्त्त का केन्द्रबिन्दु है। यह वह द्वार है जहाँ यदि शत्रु ने अधिकार जमा लिया तो वहाँ से उसे खदेड़ना दुष्कर हो जायगा। आर्य्यभूमि में उसके पैर जम जायेंगे।

पृथ्वीराज : नाना जी ! हम अजयमेरु में बैठकर ही आपकी सहायता कर सकते हैं।

अनंगपाल : वत्स पृथ्वीराज ! अधिक विचार-विमर्श की आवश्यकता नहीं है। हमने पर्याप्त विचार के पश्चात् ही यह कदम उठाया है।

तुर्सनखाँ : (**खड़े होकर**) आरिया समराट (**आर्य सम्राट**) की जय !

अनंगपाल : राजगुरु, आशीर्वाद दें। प्रतिहारी !

(नतमस्तक प्रतिहारी का प्रवेश)

चन्द्रशेखर : प्रतिहारी ! कुंकुम-पात्र और अक्षत शीघ्र ले आओ। मंगल-ध्वनियाँ बजाई जायें।

[नतमस्तक द्रुत गति से प्रस्थान। क्षणान्तर में कुंकुमपात्र लेकर आता है]

प्रतिहारी : गुरुदेव ! (**कुंकुमपात्र आगे बढ़ाता हुआ**) लीजिये गुरुदेव !

(उठकर राजगुरु चन्द्रशेखर पृथ्वीराज के भाल पर मंगल-तिलक कर अक्षत लगाते हैं। नेपथ्य में मंगल-ध्वनियाँ बज उठती हैं। उपस्थित समुदाय जय-जयकार करता है)

चन्द्रशेखर : सम्राट पृथ्वीराज के शुभ संकल्प पूर्ण हों। सिंहासन ग्रहण करें।

(अनंगपाल सिंहासन से उतर कर पृथ्वीराज को वहाँ बैठाते हैं। मंगलवाद्यों की ध्वनि निरन्तर उठती रहती है। फिर कुछ समय बाद मन्द होती है)

अनंगपाल : वत्स, अब हम प्रस्थान करेंगे।

(प्रस्थानोद्यत)

(समस्त परिषद्-भवन में हर्ष और विषाद का वातावरण भर जाता है। अनंगपालदेव तथा राजगुरु आशीर्वाद देते हुए प्रस्थान करते हैं। सब खड़े होकर उन्हें विदाई देते हैं।)

(शान्त वातावरण को भंग करते हुए)

कैमास : आर्य्य-सम्राट की जय हो। मेरा विचार है शासन-व्यवस्था यहीं से की जाय। अजयमेरु से राजधानी यहां परिवर्तित कर देनी चाहिए। समस्त नरेशों को सूचना भेज देनी चाहिए कि तोमर राज्य का हस्तान्तरण भी पृथ्वीराज चौहान को प्राप्त हो गया है।

चन्द : शुभ हुआ। शत्रु की गतिविधियां रोकने में शीघ्रता करनी चाहिए। चलिये, सम्राट एक बार अजयमेरु चलना होगा। भावी व्यवस्था के लिए वहां पहुंचना अनिवार्य है।

पृथ्वीराज : चलिये! मित्रवर चलिये!

(सब उठ खड़े होते हैं)

(यवनिका)

दृश्य : चार

स्थान : राजमहिषी परम भट्टारिका, इच्छनकुमारी के राज-प्रसाद की वाटिका, उससे संलग्न गवाक्ष।

समय : प्रातःवेला के पश्चात्—

[वाटिका की सुन्दरता देखने योग्य है। प्रातःकाल ने अपना चरण बढ़ा लिया है। भास्कर की सुनहरी किरणें पुष्पलताओं पर पड़कर उन्हें तेजस्वी बना रही हैं। गवाक्ष के सम्मुख नीचे जो प्रांगण है। उसमें

ग्रामीण तथा नगर-निवासी सुन्दर वेश-भूषा और साज-सज्जा में एकत्रित हो रहे हैं। ऐसा लगता है कि अजयमेरु में कोई विशेष पर्व है।

राजमहिषी अपनी कुछ परिचारिकाओं के साथ वाटिका में दृष्टिगोचर हो रही है। उनकी झोलियों में रंगबिरंगे अर्द्धविकसित पुष्प तथा कुछ कलियाँ झीने-वस्त्रों के कारण दिखाई दे रही हैं। कुछ पुष्प राजरानी स्वयं तोड़ रही है। उनकी प्रधान परिचारिका उनके समीप है।]

इच्छन : इन्दुलेखा, वल्लरियाँ पुष्पविहीन करके रहेगी क्या? बहुत हुए पुष्प, चल अब रहने दे।

इन्दु : अरी रहने दो, पुष्पों की आवश्यकता नहीं है। महादेवी स्वयं-संचित पुष्पों की माला बनायेंगी।

इच्छन : बड़ी वाचाल हो गई है तू।

इन्दु : चलिए महादेवी जी उधर गवाक्ष के समीप बैठकर माला गूँथ डालें। आर्य्य आते ही होंगे। (**परिचारिकाओं से**) अरी सुना नहीं, कुसुमों को तोड़कर क्या करना है, जाओ, सम्राट के स्वागत के लिए अन्य सामग्री ले आओ। शीघ्रता करो।

[परिचारिकाओं का शीघ्रतापूर्वक प्रस्थान]

इच्छन : इन्दु, ले चल इन्हें, माला गूँथ लें। तू सहयोग न देगी? चल जल्दी कर।

[दोनों गवाक्ष की ओर बढ़ती हैं]

इन्दु : महादेवी! मुझे कौन सा पुरस्कार मिलना है! महादेवी जब उस माला को स्वयं गूँथेंगी तभी तो उसमें सुन्दरता आयेगी। आर्य्यश्रेष्ठ तुरन्त पहचान लेते हैं, उन्हें तो मेरे हाथों में गंध आने लगी है।

इच्छन : इन्दु! (**अधरों पर भार देती हुई**) इन्दु, चुप रह। देख समय

बहुत थोड़ा रह गया है। एक-एक पल भारी पड़ रहा है। ला तेरे पास जो सुन्दर पुष्प हैं।

इन्दु : **(मृदु हास्य)** महादेवी ! अच्छा लो इन पुष्पों को, सूंघ देखो इनकी सुरभि में अन्तर पड़ गया है। **(हंसती है)**

इच्छन : तुझे न जाने कब बुद्धि आयेगी ! देवता पर चढ़ाये जाने वाले पुष्पों को भला कहीं सूंघते हैं ?

[दोनों कानों को हाथ लगाती है]

इन्दु : भूल हुई महारानी जी। **(भौं मटका कर)** मैं कब देवता की पूजा करती हूं ! मैं क्या जानूं विधि-विधान।

इच्छन : दुष्टता छोड़। देखूं उनमें कौन-सा पुष्प अच्छा है।

इन्दु : अच्छा, लो महादेवी ! किन्तु पुष्प तो सभी अच्छे होते हैं। उनमें जो त्यागभावना है, वही देना जानते हैं।

इच्छन : **(तीव्रतापूर्वक)** क्या जानते हैं ?

इन्दु : महादेवी ! पुष्प मधुकोष लुटाना जानते हैं। उदारता इनसे सीखे कोई ! पुरुष ने अपनी उदारता इन्हीं पुष्पों से तो ली है महादेवी !

इच्छन : इन्दु ! पुरुष की उदारता की कल्पना कर ली है तूने ?

इन्दु : महादेवी ! **(मृदु हास्य)** एक बार नहीं अनेक बार ! अनुभव नहीं कर रही महादेवी। आर्य्यश्रेष्ठ अपनी सरसता का मधु-कोष नहीं लुटा रहे !

इच्छन : इन्दु ला, पुष्प दे।

[इन्दु पुष्प देती है, महादेवी उन्हें ग्रहण कर सूचिका में पिरोती हैं कि सूचिका उनकी तर्जनी में चुभ जाती है। महादेवी के मुंह से हल्की चीत्कार निकल जाती है। परिचारिका सविस्मय देखती है। उसमें रुधिर-बिन्दु झलक आता है।]

इन्दु : महादेवी ! रक्त निकल रहा है। यदि आर्य-सम्राट होते तो···

इच्छन : तो क्या होता इन्दु ?

इन्दु : तो क्या होता ! पीड़ा का हरण, इस तरह··· (महादेवी की अंगुली अपने मुँह में डाल कर रक्त चूस जाती है।)

इच्छन : (मृदु हास्य) इन्दु, छोड़ दे। मेरी पीड़ा दूर हो गई।

[इन्दु छोड़कर पुनः उसे देखती है]

इन्दु : तो अब लो माला। लो पुष्प···

[इन्दु पुष्प देती है, महादेवी ग्रहण करती है]

इच्छन : न इन्दु, अब तू ही इसे पूरा कर दे।

इन्दु : अच्छा लाओ !

[पुष्पमाला लेती है, अपनी झोली में से सुन्दर-सुन्दर कलियाँ चुन कर माला में गूंथती हुई]

कितना आनन्द है इसमें !

इच्छन : माला गूँथने में भी आनन्द का अनुभव कर रही है।

इन्दु : महादेवी !

इच्छन : हूँ !

इन्दु : महादेवी ! सुन आई हूँ कि सम्राट दिल्ली में एक साथ कई प्रमदा-भवन बनवा रहे हैं।

इच्छन : दिल्ली में ! एक साथ कई !

इन्दु : एक साथ छः।

इच्छन : होगा। अच्छा ही है।

इन्दु : अच्छा नहीं है, महादेवी, तब और भी देर तक प्रतीक्षा करनी होगी। पद्मावती, शशिव्रता, चित्रांगदा और···और···सबके भवन पृथक्-पृथक् होंगे।

इच्छन : इन्दु ! (मार डालती हुई) इन्दु ! तूने मर्मस्थान पर चोट की

है इन्दु ।

इन्दु : अपराध क्षमा हो महादेवी ! पुरुष एक नहीं अनेक नारियों को अपनी उदारता का प्रासाद देता आ रहा है । एक-एक प्रासाद क्रीड़ास्थली बनेगा ।

इच्छन : (गम्भीरता पूर्वक) एक-एक प्रासाद क्रीड़ा-स्थली बनेगा । युद्ध और विवाह आर्य्य नरेशों के लिये खेलवाड़ हो गये हैं । विवाह-प्रस्ताव स्वीकार न करने पर कितना रक्त बहाया जाता है ! छोटा-बड़ा प्रत्येक नरेश, आयु और अपनी सीमा का भेद भी नहीं देखता, केवल शक्ति को नापता है । शक्ति के बल पर दीर्घायु भी अल्पायु बालिकाओं पर अपना अधिकार प्रकट करते हैं । इन विवाहों को बलात्कार की संज्ञा न दी जाय तो क्या कहा जायगा ?

इन्दु : नारी त्याग की प्रतिमूर्ति बन कर आई है, उसे त्यागमय जीवन बिताना होता है । महादेवी एकाङ्गी प्रेम की अधिकारिणी न बन पाई । ऐसी कौन-सी नारी है जिसे अपने स्नेह-पात्र से दो बूँदें देना भी अभीष्ट होगा !

इच्छन : इन्दु ! (गंभीरता पूर्वक) समय का दुर्भाग्य है । इतिहास की गाथाएँ सुन रखी हैं कि सह-पत्नियों का जीवन कितना भार-स्वरूप हो जाता है । उनकी सरसता में एक अकल्पित अवरोध खड़ा हो जाता है । नारी पुरुष का पूर्ण अनुराग-स्नेह चाहती है ।

(महादेवी के नेत्रों में अश्रु झिलमिला जाते हैं)

इन्दु : महादेवी ! नेत्रों में करुणाश्रु ! मेरे विनोद से महादेवी के हृदय पर ठेस पहुँची ।

इच्छन : इन्दु ! (अश्रु पोंछती हुई) तेरे विनोद में नारी की पीड़ा झाँक रही है । तेरे मस्तिष्क ने नारी-हृदय—मेरे हृदय की भावना की कल्पना कर डाली है । इन्दु ! बहु-विवाह की ये परम्परायें मानव-

जीवन के लिये दुःखदायी ही सिद्ध हुई है। दशरथ ने यदि एक पत्नीव्रत की मर्यादा पाली होती तो उनके प्राणप्रिय श्रीराम को वनवास न जाना होता। कितना दुर्भाग्य लेकर आई हूँ! आर्य्यपुत्र का वरण करते समय ऐसी कल्पना भी न थी, और जिस समय गुर्ज्जरेश्वर ने अपनी इच्छा मुझे द्वितीय पत्नी के रूप में वरण करने की की थी उस समय भी मेरे मन में सिहरन हो उठी थी। नहीं जानती थी कि मेरा भाग्य उसी चक्र में बँधा हुआ है, जिसे घूमना ही है। पुरुष नारी-हृदय पर, उसकी कोमलता पर, उसकी विवशता पर एक भारी भरकम शिला-खण्ड रख देना चाहता है। शिलाकार रख कर ही उसे शान्ति नहीं मिलती, अपनी कथनी और करनी को गौरव का बाना पहनाता है।

इन्दु : महादेवी, क्षमा! मेरी मान्यता है पुरुष जितना नारी की देह से अनुराग करता है, उतना उसके मन से नहीं। नारी का आकर्षण उसके प्रेम का मापदंड बन गया है।

इच्छन : पुरुष का दर्प है यह। जिस पुरुष की तलवार में जितना अधिक तीक्ष्ण पानी है, उसकी लालसा-लिप्सा भी उतनी ही बढ़ी हुई है। हो सकता था, मैं पिताजी को रक्त-सरिता में कूदने से बचा लेती। हो सकता था, शत-शत माताओं के पुत्रों को आश्रय से वंचित न होना पड़ता, हो सकता था अनेक सौभाग्यवतियों की माँग का सिन्दूर न पुछता—हो सकता था सहस्रों शिशु अनाश्रित न होते।

इन्दु : विधि के विधानों की स्याहियाँ नहीं मिट पातीं महादेवी। जिस चक्र में घूमना होता है विधना वैसी ही परिस्थितियाँ पैदा कर देती है। महादेवी, माला पूर्ण हो चुकी है। अब केवल अन्तिम ग्रन्थि बाँधनी है उसे आप पूरा कर दें।

इच्छन : इन्दु ! (**लेकर**) इस ग्रन्थि में अपना भाग्य और प्रेम दोनों बाँध देना चाहती हूँ।

इन्दु : प्रभु के बड़े हाथ हैं महादेवी। दुःखद कल्पनाएँ भुलाकर उस सुखद भावना की कामना करें, जब महादेवी की भुजाएँ आर्य्य-श्रेष्ठ, भारत सम्राट् की ग्रीवा में पुष्पमाला के साथ उठ जायेंगी। और नरेन्द्र उन उठी भुजाओं को मन्द मुस्कान के साथ अपनी अञ्जलि में ले लेंगे।

इच्छन : (**भावविभोर होती हुई**) इन्दु ! (**निश्वास छोड़ती हुई**) आर्य्यपुत्र की मधुर मुस्कान युग-युग तक देखती रहूँ (**धीमी ध्वनि**) बिना एक पल की जुदाई सहे। कामना करती हूँ कि सरस जीवन की शत-शत धाराएँ एक साथ फूट पड़ें।

[**सहसा गवाक्ष के आँगन में कोलाहल बढ़ता है, ढोलों की तीव्रध्वनि सुनाई पड़ने लगती है। इन्दु उठकर गवाक्ष में पहुँचकर उस कोलाहल को देखने लगती है। तदनन्तर**]

इन्दु : महादेवी पधारें। ग्रामीण महिलाएँ नृत्य के लिये प्रस्तुत हो रही हैं। सम्राट का जय-जयकार करता हुआ जन-समूह सरिता के वेग के समान बढ़ता चला आ रहा है।

इच्छन : सम्राट की विजय के गीत गाये जा रहे हैं। (**नीचे की ओर देखकर**) नर्तकी—एक हाथ कमर पर, दूसरे हाथ से सिर पर रखी हुई टोकरी पकड़े घुघुरों की रुनन-झुनन···

इन्दु : कितनी आकर्षक लग रही है ! कितनी मोहक···

[**प्रतिहारी का प्रवेश। इन्दु उसी ओर तन्मय है**]

प्रतिहारी : (**नतमस्तक**) महादेवी की जय हो। सम्राट पधार रहे हैं।

इच्छन : सुना प्रतिहारी !

प्रतिहारी : (**नतमस्तक**) आ पहुँची महादेवी !

इच्छन : आर्य्य पुत्र पधार रहे हैं, इन्दु !

इन्दु : (**चौंकती हुई**) आ रही हूँ, महादेवी।

[**कभी-कभी नर्तकों की ओर देखती हुई जाती है**]

इच्छन : आर्य्यपुत्र बहुत दिनों बाद पधारे हैं···मिलन की बेला···स्वागत करें, आओ चलें।

इन्दु : हृदय में आनन्द का स्रोत उमड़ रहा है महादेवी !

[**इधर-उधर देखते पृथ्वीराज का प्रवेश**]

पृथ्वीराज : कहाँ हैं महादेवी ? महादेवी, देखिये अजयमेरु की प्रजा आनन्द-विभोर हो रही है।

[**महादेवी आगे बढ़कर पुष्पमाला सम्राट की ग्रीवा में डालना चाहती हैं कि मन्द मुस्कान के साथ अनुराग-भावना प्रदर्शित करते हैं**]

इच्छन : आर्य्यपुत्र ! इन्दु !

[**नतमस्तक शीघ्रता पूर्वक इन्दु का प्रस्थान**]

पृथ्वीराज : महादेवी, जन-जीवन में उत्साह भरा हुआ है। (**महादेवी के मुख की ओर देखकर**) प्रतीत होता है महादेवी किसी उलझन में व्यस्त थीं। मुखाकृति···

इच्छन : विराजिये महाराज, हर्षोल्लास के कारण नेत्र झिलमिला आये थे। तोमरेश्वर के उत्तराधिकारी नियुक्त हुए हैं आर्य्य पुत्र! इसी हेतु हर्ष के अश्रु झिलमिला आये थे···

पृथ्वीराज : (**अञ्जलि में अञ्जलि डालकर**) हर्ष का सागर आनन्द की सीमा तोड़ गया है, महादेवी।

इच्छन : उस सागर में आर्य्यपुत्र का अनुराग हिलोरें ले रहा है। कुछ धारायें अपनी सीमा से आगे बढ़ गई हैं।

पृथ्वीराज : महादेवी अजयमेरु के लोकजीवन में रुचि रखती होंगी ? यहाँ के लोक-नृत्य और लोक-संगीत हमारी पुरातन संस्कृति और परम्पराओं को अक्षुण्ण बनाये हुए हैं। विजय-समारोह और पर्वों पर नागरिक और ग्रामीण मिल-जुलकर हर्षोल्लास मनाते रहते हैं। गणगौर, सौभाग्य तृतीय और दुर्गाष्टमी के जैसे पर्वों पर स्त्री-पुरुष सभी इसमें योग देते आ रहे हैं, युग-युग से ! लोक-नृत्यों की परम्परायें हमारे यहाँ अनादि काल से चली आ रही हैं। सार्वजनिक और सामूहिक आनन्द का सबसे बड़ा साधन ये लोक-नृत्य ही हैं। युग-नायकों का आश्रय पाती हुई आज भी ये परम्परायें जीवित हैं। कितना महत्त्वपूर्ण योगदान है उनका। स्वस्थ परम्परायें जन-जीवन को प्राण देती रहती हैं महादेवी।

इच्छन : सुन्दर परम्परायें हैं ये श्रीदेव !

पृथ्वीराज : हमारे देश की धरोहर हैं ये लोक-नृत्य। इन नर्त्तकों को राज्य का आश्रय मिला हुआ है।

इच्छन : आर्य्यपुत्र, मनमोहक वेश-भूषा, साज-सज्जा के साथ यह नृत्य अपनी लय, ताल और गति से उल्लासमय वातावरण बना रहा है। निश्चय ही इन परम्पराओं को राज्य-आश्रय मिलना चाहिये। इनकी वेश-सज्जा तो राज-प्रासादों के रंग-वैभव से ही समता रख रही है।

पृथ्वीराज : सोमेश्वर ने दिल्ली का एकछत्र आधिपत्य दे दिया है। उस पर अब चौहान-ध्वज स्थापित होगया है। अतः ये आयोजन किये गये हैं। यह घूमर-नृत्य है।

इच्छन : आर्य्य सम्राट को गौरव मिल रहा है, उनकी कीर्ति विस्तारित हो रही है।

पृथ्वीराज : और महादेवी भी तो उसकी अधिकारिणी हैं ?

इच्छन : उपकृत हूँ आर्य्यपुत्र !

पृथ्वीराज : उधर देखिये महादेवी, बनजारों का वस्त्र-सौन्दर्य नृत्य को कितना मोहक बना रहा है !

इच्छन : और आर्य्यपुत्र ! उन बनजारिनों का शरीर-सौन्दर्य भी तो··· एक-एक से बढ़कर है ।

पृथ्वीराज : सौन्दर्य विधाता की सर्वोपम देन है नारीजाति को । महादेवी, आवेगपूर्ण संगीत की स्वर-लहरियाँ··· **(भाव-विभोर होने का अभिनय महादेवी की अञ्जलि पकड़ते हुए)**

इच्छन : सौभाग्य ! आर्य्यपुत्र, इन स्वस्थ परम्पराओं के दर्शनमात्र से कितना आनन्द मिल रहा है ! आर्य्य सम्राट का जीवन सुखमय हो, उल्लास-सागर में युगयुगान्तर तक हिलोरें लेता रहे ।

पृथ्वीराज : मंगल कामनाओं के लिये उपकृत हैं । **(महादेवी की ओर देखकर)** किन्तु··· **(साश्चर्य)** महादेवी ! महादेवी ! चित्त पर मलिनता क्यों ? इस वेदना का कारण ?

इच्छन : आर्य्यपुत्र !···

पृथ्वीराज : रुक क्यों गई आर्य्ये ? आनन्द की मधुर बेला में दुख की बदली बरसना चाहती है !

[**महादेवी के नेत्रों में अश्रु झलक आते हैं**]

पृथ्वीराज : करुण मूर्ति ! क्या हुआ !

इच्छन : **(सिसकी भरकर)** आर्य्य सम्राट की जय हो । **(सव्यथा)** आर्य्यपुत्र ! कितना करुणापूर्ण है वह नृत्य ! बनजारिन का सौभाग्य छिना जा रहा है । नई साज-सज्जा, भाव-कटाक्षों···वह नर्तकियाँ देखिये ! देखिये, आर्य्यपुत्र उस बनजारे को···एक ही फूल पर न जाने कितनी भ्रमरियाँ मँडराने लगी हैं । घेर रखा है उस

बनजारे को।··· (व्यथापूर्ण हास्य) और वह बनजारिन···वह टुकर-टुकर देख रही है···नगीना छीने लिये जा रही है···आर्य्य पुत्र ! वह उसे छीने लिये जा रही है···वह चलदी बनजारे का हाथ पकड़े। आर्य्यपुत्र ! आर्य्यपुत्र नहीं देख सकूंगी यह नृत्य ! उस बनजारिन की पीड़ा ! (उठ खड़ी होती है)

पृथ्वीराज : महादेवी स्वस्थ हों, अभिनय है।

इच्छन : (सव्यथा) अभिनय में भी प्राण है। सत्य छिपा है प्राणेश्वर। उसमें मुझे सत्य के दर्शन हुए हैं।

पृथ्वीराज : (उठ कर) महादेवी ! लोकनृत्य से महादेवी का अन्तर-मन प्रसन्न होना चाहिये। लोकनृत्य सुन्दरता की सृष्टि करते हैं। कल्पना के रंगों में डूबकर दर्शक···

इच्छन : (सकरुणा) सुन्दरता में सत्य छिपा रहता है आर्य्यपुत्र ! सत्य कल्याणकारी है।

पृथ्वीराज : महादेवी के हृदय-सागर में भावों का नर्तन हो रहा है। किसी भावी आशंका से प्रभावित हो गया है मन ! भविष्य की किसी दुखद कल्पना ने···

[महादेवी पृथ्वीराज के मुख पर अंजलि रख देती है।]

इच्छन : मेरा भविष्य उज्ज्वल है महाराज। आर्य्यपुत्र का गौरव उन्नत हो।

पृथ्वीराज : तो सरसता के वातावरण में वेदना का समुद्र क्यों उमड़ रहा है ? हृदय-सागर के महातल में कोई रहस्य अवश्य छिपा है महादेवी !

इच्छन : आर्य्यपुत्र, चलिये। सम्राट का वैभव-सूर्य प्रचण्ड रहे।

पृथ्वीराज : चलें, उस लतामण्डप के समीप बैठेंगे। (बढ़ते हुए) महादेवी की पीड़ा से हमारा अन्तरमन विचलित होता जा रहा है।

महादेवी अपनी व्यथा प्रगट करें, सम्भव है उसे सुनकर···

इच्छन : आर्य्य पुत्र को अपनी व्यथा में सम्मिलित कर कर्तव्य-धर्म से दूर हो जाऊंगी ?

पृथ्वीराज : अपनी व्यथा हमसे न कहोगी तो फिर किससे कहोगी ! पुरुष और नारी दोनों एक दूसरे के पूरक हैं—एक रथ के दो पहिये। यदि महादेवी ने व्यथा मोल ले ली तो क्या हम अछूते रह जायेंगे ?

[**इच्छन दीर्घ निश्वास-सिसकियाँ भरती है, अपना सिर महाराज के वक्ष पर रख देती है। महाराज उसके बाहु पकड़ लेते हैं और निश्वास छोड़ देते हैं।**]

इच्छन : आर्य्यपुत्र क्षमा, अपनी पीड़ा में आर्य्य सम्राट को भागीदार बनाये जा रही हूँ।

पृथ्वीराज : महादेवी, हमें संताप नहीं है इसका। हम चाहते हैं महादेवी को किसी भाँति प्रसन्न कर सकें।

इच्छन : (**पुनः भावावेश**) आर्य्यपुत्र !···आर्य्यपुत्र !! (**श्वास बढ़ा हुआ दिखाई देता है**) आर्य्यपुत्र···अज्ञात दिशा से···(**ध्वनि-परिवर्तन**) एक अज्ञात हाथ सम्राट की ओर बढ़ रहा है।···

पृथ्वीराज : महादेवी ! महादेवी !! क्या हुआ है तुम्हें ?

इच्छन : (**उसी भावपूर्ण मुद्रा में**) सम्राट की ओर, आर्य्यपुत्र की ओर···(**एक साथ बैठ जाती है**)

[**सम्राट भी उसके समीप ही बैठकर आश्रय देते हैं।**]

पृथ्वीराज : मन-मस्तिष्क पर किसी भयांनक कल्पना ने प्रभाव जमा दिया है। महादेवी स्वस्थ हों।

इच्छन : एक अज्ञात हाथ भिक्षा का पात्र लिये, बढ़ रहा है···कोई··· रमणी-कण्ठ पुकार रहा है। आर्य्यपुत्र, वह पुकार रहा है।

पृथ्वीराज : (**सविस्मय**) आश्चर्य !...अज्ञात दिशा से !...अज्ञात हाथ !...भिक्षा पात्र लिये !...रमणीकण्ठ पुकार रहा है ! महादेवी ! महादेवी ! ! स्वस्थता धारण करो। यह सब मिथ्या भ्रम है।

इच्छन : (**सिसकते हुए**) मैं न जाने दूंगी। प्राणधन के इन चरणों से दूर न होने दूंगी अपने को।

[**सहसा एक लता-मण्डप पर एक भ्रमर आकर एक पुष्प से दूसरे पुष्प पर गिरता है-उठता है।**]

इच्छन : आर्य्यपुत्र ! वह देखिये (**संकेत**) वह भ्रमर एक पुष्प से दूसरे पुष्प का रस ले रहा है।

पृथ्वीराज : निष्ठुर भ्रमर !

[उठकर उसे **अपने** उत्तरीय से भगाते हैं।]

इच्छन : रस का पान कर...आर्य्यपुत्र क्या कहा आपने निष्ठुर ! निःसन्देह वह निष्ठुर है, उसका आचरण उचित नहीं है।

पृथ्वीराज : (**विचारपूर्वक**)प्रिये, अविश्वास को जन्म न दो। प्रेम अविश्वास के हथियार से अपनी हत्या स्वयं कर लेता है।

इच्छन : (**स्वस्थ होकर**) आत्म-घात...आत्म-घात न करने दूंगी उसे। क्षमा मेरे प्रभु ! मेरे जीवनाधार, क्षमा ! भावनायें नीरस न होने दूंगी। मेरी कामना सुफलवती हुई है। ठीक है...फिर यह अन्धकारमयी कल्पना क्यों उठ रही है ! नहीं आर्य्यपुत्र, अविश्वास कैसे कर सकूंगी ! बनजारा...कल्पना कर रही हूं, बनजारा अपनी पुरानी बनजारिन के पास लौट आया है। (**भावावेश**) परम्परायें टूट सकती हैं। टूट जायेंगी ऐसी परम्परायें।

[**महाराज राजमहिषी के कपोलों पर लुढ़कते हुए आंसू पोंछने लगते हैं।**]

पृथ्वीराज : हमें स्वीकार करना पड़ता है महादेवी, ऐसी परम्पराओं से राष्ट्र और समाज दोनों का अहित होता आया है । हमने महादेवी की कल्पना समझ ली है । बहु-विवाह की परम्परायें दुखद हैं । राज्य के कर्णधारों को भी मिटा देती हैं, इन युद्ध-विवाहों में राष्ट्र की सम्पत्ति नष्ट हो जाती है । यह भी स्वीकार करते हैं कि बहु-विवाह से पारिवारिक जीवन भी कटुमय-संघर्षमय हो जाता है । किन्तु क्षत्रिय को कोई चुनौती देता है तो उसका वीरत्व । वह उसे नियंत्रण में नहीं रहने देता । अपने गौरव की रक्षा के लिये उसे विवशता का आश्रय लेना ही पड़ता है । किन्तु युग आयेगा जब यह सब मिट जायगा । मिथ्या दम्भ को एक बार नीचा देखना पड़ेगा । महादेवी सम्राज्ञी पद पर ही आसीन रहेंगी । महादेवी के गौरव की ओर आँख उठाने वाले हमारे शत्रु बन जायेंगे ।

इच्छिनी : आर्य्यधन ! दासी तो हृदय-सिंहासन की अभिलाषी है । स्वर्ण-गौरव पर स्थित सिंहासन की कामना नहीं है ।

पृथ्वीराज : आश्वस्त हों महादेवी, चलिये । कुछ विश्राम कर लें । मध्याह्नोपरान्त राजकवि चन्द पधारेंगे । चलो उठो ।

[उठकर दोनों का प्रस्थान]

(यवनिका)

दृश्य : पाँच

स्थान : दिल्ली, महाराजाधिराज सार्व्वभौम सम्राट पृथ्वीराज चौहान की राज-परिषद् ।

समय : मध्याह्नोपरान्त ।

[सम्राट पृथ्वीराज की राज-परिषद् अश्वमेध की राज परिषद् के

समान ही सुसज्जित है। चौहान एवं तोमर-परिषदों का समन्वय दृष्टि-गोचर हो रहा है। मन्त्रि-परिषद् तथा सामन्त-कक्ष पृथक्-पृथक् दिखाई दे रहे हैं। मंत्रणा गम्भीरतापूर्वक चल रही है।]

चन्द : (खड़े होकर) श्रीमान्! इस प्रकार की भूलों की पुनरावृत्ति कब तक करते जायेंगे? आये दिन शत्रु को अभय-दान दे-देकर हम संकटों से छुटकारा नहीं पा सकेंगे।

पृथ्वीराज : कविराज चन्द! यह चन्द कह रहे हैं! हमें आश्चर्य हो रहा है। हमारी उदारता से हमारे बाल-साथी परिचित हैं।

चन्द : उदारता ने ही तो शत्रु का मस्तक काटने से रोक दिया। अन्यथा उस नराधम के पैर हमारी पृथ्वी पर न पड़ते। हम जानते हैं, सम्राट ने अपनी अपरिमेय शक्ति से उसे बन्दी बनाया है। यह विजय भारत के इतिहास में अमर रहेगी। श्रीमान् दिल्ली की दीवार-दीवार पर सम्राट् की कीर्ति अंकित रहेगी। फिर भी हम चाहते हैं इस बार उसे यह पाठ पढ़ाया जाय जो स्मरण रहे।

[बैठते हैं]

कैमास : (खड़े होकर) बन्दीगृह की दीवारों से उसे टकरा-टकरा कर मरने के लिए बाध्य कर दिया जाय। श्रीमान्, शाहबुद्दीन गोरी ने अनेक मंदिर ध्वस्त किये हैं। अनेक भारतीयों की निरपराध हत्या की है।

[बैठते हैं]

चामुण्डराय : (खड़े होकर) जिसने हमारे देश की स्वतंत्रता, हमारी संस्कृति और हमारी सम्पत्ति का विनाश किया है उस शत्रु से गिन-गिन कर बदला लिया जाय देव। अब हमें उदारता की आवश्यकता नहीं। उदारता उसी के साथ की जानी चाहिए श्रीमान्, जो वास्तव में उसके अधिकारी हैं।

पृथ्वीराज : चामुण्डराय तुम्हारी वीरता, त्याग-बलिदान और देश-भक्ति का पृथ्वीराज ऋणी है। गोरी के सम्बन्ध में चर्चा करने से पूर्व हम चाहते हैं कि तुम्हें पुरस्कृत किया जाय।

चामुण्डराय : (सविनय) श्रीमान्, मैंने तो अपना कर्त्तव्य निभाया है। यह आपका ही प्रताप है।

पृथ्वीराज : फिर भी तुम हमारे राज्य के गौरव हो। गौरवशाली को गौरवान्वित न किया जाय तो हम भी अपने कर्त्तव्य से विमुख हो जायें। सेनाध्यक्ष, हम प्रत्येक इच्छा पूरी करेंगे।

चामुण्डराय : (सविनय) यदि श्रीदेव अनुग्रह करना चाहते हैं तो··· एक अनुरोध···

पृथ्वीराज : सेनापति की शक्ति और साहस से दिल्ली गौरवान्वित हुई है। एक नहीं, दो अनुरोध···कहें निःसंकोच कहें।

चामुण्डराय : युद्धभूमि में सैकड़ों वीरों ने वीरगति पाई है श्रीमान्।

पृथ्वीराज : उनकी सेवायें भुलाई नहीं जा सकतीं। हमें स्मरण है।

चामुण्डराय : उन्हें पर्याप्त आर्थिक सहायता दी जाय। उनके परिवारजनों को उसे उपलब्धि करने के लिए कष्ट न उठाना पड़े।

पृथ्वीराज : ऐसा ही होगा चामुण्डराय। निश्चित धन उनके निवास स्थान पर ही पहुँचा दिया जायगा। असहाय परिवारों को नियमित वृत्ति मिलती रहेगी। किन्तु चामुण्डराय, हम चाहते हैं कि तुम्हें भी पुरस्कृत किया जाय।

चामुण्डराय : उनके असहाय शिशु-बालकों की शिक्षा-दीक्षा का प्रबन्ध राज्यकोष से हो।

पृथ्वीराज : स्वीकार है चामुण्डराय, स्वीकार करते हैं, किन्तु अपने लिए भी तो कुछ कहो।

चामुण्डराय : मैंने सदा ही स्वामी का नमक खाया है। आशीर्वाद दें श्रीमान्, उसका निर्वाह करता रहूँ।

[**प्रतिहारी का प्रवेश**]

प्रतिहारी : (**नतमस्तक**) आर्य्य सम्राट की जय हो। युद्ध-बन्दी शहाबुद्दीन गोरी उपस्थित हैं।

पृथ्वीराज : आने दो।

[**नतमस्तक प्रतिहारी का प्रस्थान**]

चामुण्डराय (सविनय) परिषद् देख ले, राष्ट्र के शत्रु मुहम्मद गोरी को भली-भाँति देख लें। बहुतों ने तो पहले भी देखा है…

[**चार चौहान-सैनिक शृंखला में बँधे शाहबुद्दीन गोरी को लाते हैं**]

पृथ्वीराज : आइये आपके साम्राज्य का स्वप्न पूरा हुआ शाहबुद्दीन मुहम्मद गोरी ?

[**शाहबुद्दीन गोरी नीची दृष्टि किये खड़ा रहता है**]

पृथ्वीराज : सैनिको, बन्दी पर शृंखला का भार क्यों डाल रखा है। मुक्त कर दो उन्हें।

[**सैनिक गोरी को बन्धनमुक्त करते हैं**]

चामुण्डराय : गोरी ने लड़ाई हारी है, मन नहीं। क्यों शाहे गोर ?

गोरी : हमसे फिर गलती हो गई है, शाहे हिन्दुस्तान !

पृथ्वीराज : गलती कैसी ? शाहे गोर वीरता का दम्भ भरते आये हैं। वह मुकरना कोई गलती नहीं।

चन्द : गलती करना तो हमारे सम्राट से सीखो !

[**बैठते हैं**]

पृथ्वीराज : चन्द, हमें अवसर मिले तो हम फिर गलती करें। हम शत्रु को केवल युद्ध-भूमि में शत्रु मानते हैं। उसके बाहर वीर की प्रशंसा सुनना चाहते हैं।

गोरी : आलमगीर, हमें तानों से न मारो। हम अपनी शर्म से खुद ही मर चुके हैं।

कैमास : (**खड़े होकर**) कायर अपनी मौत मरते हैं शाहे गोर!

चन्द : शाहबुद्दीन गोरी बुजदिल कहाँ है मंत्रिवर। बुजदिल वक्त से पहले ही मर जाते हैं। एक बार नहीं, अपनी जिन्दगी में कई बार। क्यों जनाबे मन?

गोरी : ऐसी कहावत हमारे मुल्क में भी दुहराई जाती है। हमारे मुल्क में माएँ जब बच्चों को दूध पिलाती हैं'''तो'''

चामुण्डराय : तब क्या होता है शाहे गोर? हम जानना चाहते हैं।

गोरी : ''''''(निरुत्तर)

[**गोरी नीची निगाह किये खड़ा रह जाता है**]

पृथ्वीराज : बेखटके कहो गोरी, हम सुनना चाहते हैं।

गोरी : उन्हें एक ही सबक सिखाया जाता है'''शाहे हिन्दुस्तान।

कैमास : (**सव्यंग**) यही सिखाया जाता है कि जो कुछ कहो उसे पूरा कभी मत करो।

[**पृथ्वीराज मुस्कराते हुए दिखाई देते हैं। उन्हें देखकर परिषद् के अन्य कुछ लोग हँस पड़ते हैं**]

पृथ्वीराज : अमात्यराज, गोर के बादशाह के मुँह से सुनकर अच्छा लगेगा। (**गोरी के प्रति**) बेखटके कहिए। हम सुनना चाहेंगे।

गोरी : जब शाहे हिन्दुस्तान सुनने को बेताब हैं तो'''

पृथ्वीराज : तुम्हारी जान अमानत है।

गोरी : माएँ गा-गाकर कहती हैं, 'बेटा, मादरे वतन पर जाँ निसार हो जाना।'

पृथ्वीराज : तब बादशाह-सलामत वतन के लिए मर जाना चाहते हैं। खयालात ऊँचे हैं। मगर मरना इतना आसान नहीं।

गोरी : शर्मिन्दा न करें दिल्लीनरेश ! अच्छा होता शाहे हिन्दुस्तान लड़ाई के मैदान में हमारा सफ़ाया कर देते।

चामुण्डराय : सम्राट, मैदान में गिरे हुए शत्रु पर वार करना नहीं सीखा हमने। भागते हुए का पीछा नहीं करते। अगर शाहे ग़ोर जमीन पर न गिरते और उनके हाथ में तलवार होती तो मुमकिन था आर्य्य सम्राट उस ख्वाहिश को पूरी कर देते।

गोरी : हम खुद शर्मिन्दा हैं शहंशाहे हिन्दोस्तान। हम मुआफ़ी चाहते हैं।

कैमास : शत्रु को दूसरी बार ही छोड़ देना भूल है। लेकिन सम्राट ने शाहबुद्दीन मुहम्मद गोरी को चार बार जीवन दान दिया है।

पृथ्वीराज : कैमास अमात्य-शिरोमणि, देने वाले से मांगने वाला बड़ा है।

चन्द : सम्राट की जय हो ! परिषद् की भावना समझें, उसे सम्मान मिलना चाहिए श्रीमान् ! ग़ोर के बादशाह ने हमारी भूमि पर बर्बरता का नाच नाचा है। हमारे देव-मन्दिरों को अपवित्र किया है। हमारे देश का धन लूट-लूट कर ले जाते रहे हैं। जब कौवे खेत को नुकसान पहुँचाते हैं तो खेत का मालिक एक ही कौवे की जान लेकर उसे खेत की मुंडेर पर ऐसी जगह जहाँ दूसरे पक्षी भी देख सकें, टाँग देता है। उसके भय से दूसरे पक्षी खेत को नुकसान नहीं पहुँचा पाते। ग़ोरी का शिर काटकर भारत भूमि के प्रवेश-द्वार पर लटका दिया जाय जिससे इस ओर आने वाले डरते रहें। मेरा मतलब समझ गए होंगे शाहे ग़ोरे ?

गोरी : हिन्दोस्तान में कितनी ही बार आया हूँ, यहाँ की बोली समझ लेता हूँ।

पृथ्वीराज : मुहम्मद ग़ोरी, तुम्हारी जान वापस की जा सकती है, मगर

शर्तें कड़ी हैं ।

गोरी : शर्म से जमीन में गड़ा जा रहा हूँ । अपनी जान की एवज़ में दिल्ली सल्तनत के महाराजाधिराज जो हुक्म देंगे मंजूर करूंगा ।

पृथ्वीराज : जितने सोने के सिक्के गोर के खजाने में मौजूद हैं वे सब हमें दिये जायँ, हमारा मतलब उन सिक्कों से है जिन पर शाहे गोर ने अपने नालायक विचार खुदवा रखे हैं ।

गोरी : महाराजाधिराज !

चन्द : वे सब सिक्के गोर-वासियों से ढूंढ़-ढूंढ़कर मंगवाए जायें जिन पर एक तरफ आर्य्य-सम्राट पृथ्वीराज का और दूसरी तरफ 'हमीर महमद साय' खुदवा कर लोगों में गलत फहमी पैदा की जा रही है ।

कैमास : और कुछ ऐसे भी सिक्के यहाँ लाये जा रहे हैं जिन पर 'हमीर महमद साय' की जगह 'श्रीमहमद नबे साय' खुदा हुआ है ।

चन्द : आर्य्य सम्राट ऐसे कलंकी गोरी को दण्ड दिया जाना चाहिये । भारत--आर्य्य भूमि और आर्य्य सम्राट् के यश पर कलंक का टीका ! इसकी सजा मौत ही हो सकती है । गोरी कुछ कहना चाहते हो ?

गोरी : शहंशाहे हिन्दुस्तान, मुआफ़ी चाहता हूँ । यह नापाक इरादा माधवभट्ट का रहा होगा ।

पृथ्वीराज : (उच्च स्वरसे) मुहम्मद गोरी जान की खैरियत चाहते हो तो ईमानदारी और सचाई का सबूत दो । कैमास, इन्हें सिक्के बताए जायें ।

[कैमास सिक्के बताते हैं]

गोरी : (घबराते हुए) सच-सच बताता हूँ महाराजाधिराज । जिस

सिक्के पर 'हमीर महमद साम' लिखा गया है वह ग़ोर के खजाने से ताल्लुक रखता है और दूसरा शायद नकली है। हो सकता है माधवभट्ट ने अपने खुद के फायदे के लिए बनवाए हों। वह हमारा खजानची भी है और अपना खुद का कारोबार भी करता है। यकीन दिलाता हूं, ग़ोर में ही नहीं, अपने मातहत मुल्कों से तलाश करवा के एक-एक सिक्का दिल्ली के खजाने में जमा करा दूंगा। तीन महीने की मोहलत चाहता हूं।

पृथ्वीराज : स्वीकार है। ऐसा इन्तजाम हो कि एक भी ऐसा सिक्का वहां न रहे। हमारे कुछ सैनिक वहां जाकर सिक्के ढूंढेंगे। उनके साथ यदि धोखा किया गया तो शाहेग़ोर का सर धड़ से अलग होगा।

ग़ोरी : मंजूर है मेरे मालिक ! मेरी जां-बख्शी की जाये।

चन्द : और तीन महीने में अगर यह काम न हुआ तो···

ग़ोरी : यकीनन होगा···यकीनन होगा।

चामुण्डराय : सम्राट मेरा एक विनम्र सुझाव है। जब तक यह कार्य पूरा नहीं हो जाता शाहेग़ोर हमारे बन्दी रहें।

ग़ोरी : (सआश्चर्य) हम अपने वतन तब तक नहीं जा सकेंगे।

चन्द : नहीं लौट सकेंगे। शाहेग़ोर, इतिहास बता रहा है कि आपने कौल कभी नहीं निभाया। हर बार दांतों में तिनका दबाकर अपनी ज़िन्दगी की भीख मांगी है और सम्राट ने भरोसा किया कि ग़ोर की सेनाएं आर्य्यभूमि में न आयेंगी, मगर हर साल आयीं, आंधी और तूफ़ान लेकर आयीं। खेत और खलिहान उजाड़ती आयीं, नगरों को लूटती आयीं, कत्ले-आम करती आयीं···और हमारे उदार सम्राट ने हर बार शाहेग़ोर को जीवन दिया, सम्मान दिया···

गोरी : शाहंशाहे-हिन्दोस्तान जिन्दाबाद ! मैं आपकी दरियादिली का तलबगार (इच्छुक) हूँ। मुझ पर यक़ीन किया जाय।

चामुण्डराय : आर्य्य सम्राट यशस्वी हों ! शाहबुद्दीन मुहम्मद गोरी साधारण शत्रु नहीं है। उसके पास शक्ति है और कुटिल नीतिज्ञता भी। ग़ोरी ने मुलतान पर आधिपत्य जमा लिया। पेशावर पर अधिकार चला ही आ रहा है। खुशरो मलिक पर ग़ोर का आतंक है ही। अब दिल्ली कितनी दूर है। हमें अपनी मातृभूमि की रक्षा करनी है। ग़ोरी हमारे यहाँ रहेंगे तभी वे सिक्के यहाँ आ सकेंगे। हम आर्य्यभूमि के निवासी अपना मुख उज्ज्वल कर सकेंगे। ग़ोरी ने यह कार्य कर अपनी पाप और हेय मनोवृत्ति का परिचय दिया है। शत्रु को छोड़कर पुन: उससे युद्ध करना दूसरी बात है। हमारी शक्ति उसे फिर चुनौती दे सकती है, किन्तु हमारे देश में विदेशी मुद्रा जो फैलती जा रही है उसे रोकने के लिये कठोर कदम उठाना चाहिये। ग़ोरी को तब तक रोके रखना नीतिविरुद्ध भी नहीं है।

पृथ्वीराज : सम्भवत: परिषद् की इच्छा भी यही है।

परिषद्जन : (एक स्वर) ठीक है, हमें सेनापति चामुण्डराय और प्रधानामात्य कैमास की सलाह माननी चाहिये।

पृथ्वीराज : हम परिषद् की भावना का स्वागत करते हैं।

[ग़ोरी नीची गरदन किये खड़ा रह जाता है]

चामुण्डराय : सम्राट् शाहेग़ोर का यह वायदा तो है ही कि वे भारत में अब फिर कभी न आयेंगे।

पृथ्वीराज : चामुण्डराय हममें शक्ति है। यदि आयेंगे तो इसी प्रकार फिर स्वागत करेंगे। युद्ध करना क्षत्रियों का भूषण है। फिर हम अपनी मातृभूमि की रक्षा करते हैं, शत्रु से संघर्ष लेना अपना धर्म

समझते हैं। (ग़ोरी के प्रति) इस बार हम यह वचन नहीं चाहते। यदि आओगे तो हमें खुशी होगी।

ग़ोरी : अब कभी न आऊँगा श्रीमान्।

चन्द : कुछ अरमान और बाकी हों तो उन्हें फिर एक बार पूरा करने की कोशिश करना।

ग़ोरी : कविराज, मेरी अरमानों की कबर बन चुकी है। हर बार आपके हाथों मेरी हार बदी है। अब मेरा कोई इरादा नहीं है। दिल्ली-श्वर जिन्दाबाद! शान्ति का देवता जिन्दाबाद!

परिषद्जन : (समवेत स्वर) आर्य्य सम्राट की जय हो! आर्य्य सम्राट की जय हो!

पृथ्वीराज : आर्य्यभूमि की जय! मातृभूमि की जय!

ग़ोरी : शाहे हिन्दुस्तान जिन्दाबाद! हमारा एक और अरमान मिट्टी में मिल गया।

पृथ्वीराज : क्या था अरमान?

ग़ोरी : आपकी दिल्ली पर जीत का झण्डा फहरा कर हम अपनी ताक़त कन्नौज-नरेश जयचन्द की ताकत से टकराना चाहते थे।

पृथ्वीराज : शाहबुद्दीन मुहम्मद ग़ोरी, जयचन्द कोई ग़ैर नहीं। बाहरी शत्रु के सामने वह और हम एक होकर मैदान में आयेंगे। भारत-भूमि पर कोई भी शत्रु हमारा ही शत्रु है। चाहे चालुक्यराज भीमदेव ही क्यों न हो। अभी हमने उनके दाँत खट्टे कर दिये हैं, वह हमसे दुश्मनी भी रखते है, मगर किसी बाहरी दुश्मन ने उन पर भी अब आगे हमला किया तो हम उनकी सहायता करेंगे। हम घर में आपस में लड़ लेंगे मगर बाहरी ताकत के सामने हम उन्हें भी झुकने न देंगे।

[ग़ोरी अपनी निगाह नीची किये हुए है]

पृथ्वीराज : कविराज चन्द ! ग़ोर के सुलतान हमारे मित्र हैं। उनकी देख-रेख आपके ज़िम्मे है। उन्हें किसी चीज़ की तकलीफ़ न हो।

चन्द : आदेश पालन होगा, श्रीमान् ! आर्य्य सम्राट् की जय ! भारत भूमि की जय !

[भारतभूमि की जय के साथ पृथ्वीराज के उठने पर अन्य सब उठ खड़े होते हैं]

(यवनिका पतन)

अङ्क : तीसरा

दृश्य : एक

काल : वही पूर्ववत् विक्रम की तेरहवीं शताब्दी का उत्तरार्द्ध।

स्थान : आर्य्य सम्राट, दिल्लीश्वर पृथ्वीराज चौहान के राज-प्रासादों से लगी हुई राजवाटिका तथा गवाक्ष।

समय : सन्ध्याह्नोपरान्त।

[वाटिका में सर्वत्र लतायें झूल रही हैं। चारों ओर सघन हरियाली छाई [illegible] है। अनेक पुष्प-पादपों पर रंग-बिरंगे पुष्प खिल रहे हैं। कुछ वृक्षों पर लताएँ फैली हुई हैं। थोड़ी-थोड़ी दूर पर श्वेत पत्थर के बने आसन बने हुए हैं। जल-कुण्डों में कमलदल छाये [illegible] हैं, कुछ कमल-पुष्प अर्द्ध-विकसित दिखाई दे रहे हैं। पश्चिम दिशा की अरुणिमा समस्त वाटिका में बिखरी हुई है।

सम्राट पृथ्वीराज की नवविवाहिता राज-महिषी संयोगिता भ्रमण-वार्ता-चर्चा में निमग्न हैं। दोनों एक लता-मण्डप के समीप पहुँच कर एक श्वेत शीतल आसन पर बैठते हैं।]

पृथ्वीराज : जीवन में कितनी मधुरिमा छा गई है संयोगिता। तुम्हें पाकर जी चाहता है कि तुम्हीं में समा जाऊं। रूप-सौन्दर्य की सुरा कितनी मोहक है—मादक। संयोगिते····(कुछ रुक कर) अनन्त यौवन और जीवन की मस्ती को कवियों ने स्वर्ग बताया है। जिसके भाग्य में इसका उपयोग बदा है वह स्वर्ग-सुख के अथाह सागर में निमग्न हो गया है।

संयोगिता : आर्य्यपुत्र, सरसता ही जीवन का मूलाधार है। जीवन

स्वर्ग, जीते-जागते स्वर्ग का उपभोग करना विरलों को ही मिल पाता है। आर्य्यपुत्र को पाकर मैंने सब कुछ पा लिया है। अमरत्व मिल जायगा प्राणेश्वर के संयोग से।

पृथ्वीराज : संयोगिते ! चिर-सुख की इच्छा में संयोगिता का योगदान मिला है। उस पार का स्वर्ग किसने देखा है ! संयोगिता की रूप-सुधा में स्नान कर रहा हूं, और जब तुम अपने इन कोमल करों से सुधा-रस का एक-एक घूंट पिलाती हो तो······तो कल्पना करता हूं, इन्द्र का वैभव मिट चुका है—इस धरती पर उतर आया है, संयोगिता को पाकर कोई कामना शेष नहीं रह गई है मुझे।

संयोगिता : आर्य्यपुत्र की उदारता ने उपकृत किया है दासी का जीवन।

पृथ्वीराज : प्राणवल्लभे ! स्वप्न-लोक के स्वप्नागार में पड़ा सोचने लगता हूँ, साम्राज्य-लिप्सा व्यर्थ है। संयोगिता की कोमल भावना में रक्त का प्रवाह रुका हुआ दिखाई देने लगा है। इन सुखद आशाओं और मधुर कल्पनाओं में विभोर मन जब अतीत की घटनाओं की कल्पना करता है तो लगता है मेरा मन टूक-टूक हो रहा है। कल्पना करता हूं, वे टूटे टुकड़े बिखर-कर मेरे स्वप्न-लोक में एक बवंडर खड़ा कर रहे हैं। (भावावेश) साम्राज्य-लिप्सा······साम्राज्य-शासन की इच्छा शिथिल होती जा रही है संयोगिता ! अमरत्व की भावना मानव-जीवन को मधुरिमा से ओत-प्रोत कर देती है। अनुभव कर रहा हूँ संयोगिता, मेरे जीवन में एक बार पुनः उल्लास की बाढ़ आ रही है। यौवन के संयोग से मस्ती में झूम रहा है मेरा मन। (भावावेश) संयोगिता, तुम्हारे रूप-सौन्दर्य ने दिल्लीश्वर को कस

कर लिया है।

संयोगिता : आर्य्यपुत्र ! आर्य्यपुत्र !! (**अपना सिर पृथ्वीराज के स्कन्ध पर रखकर**) नारी-जीवन धन्य हुआ है। पुरुष की उदारता से ही तो वह प्रतिफलित होता आया है। उसे मेरे देवता, प्रेम की वेदी पर न्योछावर कर दूँगी। आर्य्यपुत्र के अनुराग को मेरा हृदय पहचानता है। मानती हूँ प्रणय-सागर में निमग्न स्वामी राज्य-शासन की ओर भी उपेक्षित रहने लगे हैं।···दासी साम्राज्य की सुव्यवस्था की कामना करती है, किन्तु वियोग सहा नहीं जाता।

पृथ्वीराज : संयोगिता का प्रणय और दिल्ली साम्राज्य का शासन दोनों का पृथक्-पृथक् अस्तित्व है। यदि मुझे पूछा जाय कि तुम्हें कौन प्रिय है, साम्राज्य अथवा संयोगिता तो····

संयोगिता : तब मुझे क्या सुनना पड़ेगा ?

पृथ्वीराज : विश्व सुनेगा पृथ्वीराज ने साम्राज्य छोड़ दिया !

संयोगिता : (**सविनय**) प्रेम की पराकाष्ठा देख रही हूँ आर्य्यपुत्र !

पृथ्वीराज : तुम साधारण नहीं हो, तुम्हारा सौन्दर्य अद्वितीय है जिस पर पृथ्वीराज एक साम्राज्य तो क्या कई साम्राज्य न्योछावर कर सकता है।

संयोगिता : संयोगिता का जीवन उपकृत हो गया है प्रभु !

पृथ्वीराज : युद्ध ! युद्ध ! द्वन्द्व करते-करते मन भर गया। संयोगिता के प्रेम और सौन्दर्य के मेघ इस जीवन-लता पर बरसते रहें, यही कामना है।

संयोगिता : आर्य्यपुत्र···देखिये मयूरी का नर्तन। मयूर के प्रणय-प्रदर्शन ने मयूरी की भावनाओं को·········। देखिये ! (**संकेत**)····

पृथ्वीराज : मुझे कुछ दिखाई नहीं देता संयोगिता ! इन आँखों में

संयोगिता का रूप-सौन्दर्य—उसके यौवन की मस्ती समा गई है।

[प्रतिहारी का प्रवेश]

प्रतिहारी : महादेवी (नतमस्तक) म···हा···देवी ! अभय···मिले।

संयोगिता : क्या है पुष्पा ?

प्रतिहारी : कविराज चन्द आज्ञा चाहते हैं।

पृथ्वीराज : कह दो हमें अवकाश नहीं।

प्रतिहारी : (नतमस्तक) आज्ञा !

(प्रस्थान)

पृथ्वीराज : संयोगिता ! तुम्हीं देखो हमें अवकाश ही कहाँ है ! ··· (गिरती ग्लानि) हमें अवकाश ही कहाँ है !

संयोगिता : चलिये प्राणेश्वर, उधर एकान्त में। आर्य्यपुत्र को एक क्षण भी अपने से दूर न होने दूंगी। जब भी कोई इस ओर आता है मेरा हृदय धड़कने लगता है। आर्य्यपुत्र ने दासी के जीवन में मधुरिमा घोल दी है, वह उसमें डूब चुकी है। पागल हो उठी हूँ। प्राणेश्वर, चलिये कहीं···दूर···चलें।

[दोनों उठते हैं। प्रतिहारी का पुनः प्रवेश]

प्रतिहारी : (नतमस्तक) महादेवी की जय हो ! जीवन की रक्षा का वचन चाहती हूँ।

पृथ्वीराज : कहो क्या कहना चाहती हो ? यही न कि कविराज आये हुए हैं।

प्रतिहारी : आर्य्यसम्राट की जय हो ! कवि···

पृथ्वीराज : आर्य्यसम्राट की जय हो ! संयोगिता, पुष्पा को बता दो संयोगिता के उद्यान में, संयोगिता के प्रासाद में हम पृथ्वीराज हैं, सम्राट नहीं। पुष्पा, कविराज सम्राट के दर्शन की लालसा लिये आये हैं तो परिषद्-भवन में प्रतीक्षा करें।

[नतमस्तक प्रतिहारी का प्रस्थान]

संयोगिता : आर्य्यपुत्र ! कविराज में दर्प भर गया है। अपने प्रभाव से आतंकित करना चाहते हैं···विद्वेष की ज्वाला फैलाना चाहते हैं।

[चलते-चलते]

पृथ्वीराज : फैलाने दो संयोगिता, हमें राज्य-शासन में रुचि नहीं है। परिषद् स्वयं सँभाले उसकी व्यवस्था। हमें विश्राम चाहिये, और विश्राम संयोगिता के पास ही मिल सकेगा।

संयोगिता : (सविस्मय) आर्य्यपुत्र ! चलिये उस विश्राम-कक्ष की ओर चलें, कितना सुहावना समय हो रहा है। चन्द्रमा की किरणें अपनी ज्योति फैलाने के लिये आकाश में झांक रही हैं।

[रुक जाते हैं]

[प्रतिहारी का पुनः प्रवेश]

प्रतिहारी : महादेवी ! अभय मिले ! (**नतमस्तक खड़ी रह जाती है**) महादेवी···

संयोगिता : कविराज क्या चाहते हैं ?

प्रतिहारी : कविराज कह रहे हैं, चौहान-वीर के मित्र कवि चन्द अपने मित्र को कुछ सुनाना चाहते हैं। पृथ्वीराज रासो के कुछ अंश।

पृथ्वीराज : पुष्पा, कविमित्र से कह दो रासो में क्या है ? यदि संयोगिता के सम्बन्ध में, उसके सौन्दर्य के सम्बन्ध में, उसके नेत्रों के सम्बन्ध में, यदि संयोगिता का नख-शिख वर्णन किया है तो··· किन्तु नहीं-नहीं, तू जाकर उन्हीं से पूछ···संयोगिता-पृथ्वीराज के प्रेम को अमर करने वाले कवित्त हैं या नहीं। संयोगिता को अमरत्व देने वाली कविता···संयोगिता सुनना चाहें तो···पुष्पा ! कविराज से कह दो अन्यथा पृथ्वीराज तो स्वर्ग का सुख भोग

रहे हैं। मित्र के स्वर्ग-सुख में मित्र बाधक नहीं बना करते।···

नेपथ्य में ध्वनि : आर्य्यसम्राट की जय हो! चन्द ने रासो का पूर्वार्द्ध रच लिया है, चौहान-वंश की विरदावलियाँ गा चुका है, अब तक के युद्धों का वर्णन करते हुए उसकी वाणी से वीरत्व फूट पड़ा है···

पृथ्वीराज : युद्ध! युद्ध!! (उच्च ध्वनि) कविराज! युद्ध की विभीषिकाएँ स्वयं देखी हैं पृथ्वीराज ने।

ध्वनि : मेरे वर्णन से युद्ध प्रत्यक्ष दर्शन से भी अधिक सत्य दिखाई देंगे।··सम्राट!

पृथ्वीराज : कवि चन्द हमें सम्राट मत कहो, इस समय हम केवल पृथ्वीराज हैं। संयोगिता के क्रीड़ा-कक्ष में सम्राट का कोई अस्तित्व नहीं। सम्भवतः आपने हमारा आदेश सुना नहीं।

ध्वनि : चौहान-शिरोमणि! हमने राजमहिषी संयोगिता का विवाह-वर्णन भी किया है···सौन्दर्य-वर्णन भी···

पृथ्वीराज : कविराज! हमारे नेत्र उस सौन्दर्य का गरल पान कर गये हैं···

ध्वनि : (एक साथ कई स्वर) आर्य्यसम्राट की जय हो! आर्य्यभूमि की जय हो!

पृथ्वीराज : (सविस्मय) यह सब क्या है? कवि चन्द, यह सब क्या कौतुक रचा जा रहा है? तुम्हारी उद्दंडता की सीमाएँ बढ़ गई हैं। (पुनः ध्वनित होता है) चौहान-कुलभूषण, भारत-सम्राट की जय!

पृथ्वीराज : हमारे विश्राम की वेला में उपद्रव! हम दण्ड देंगे।

ध्वनि : आप मनुष्य हैं, सम्राट ही दण्ड देने के अधिकारी हैं।

पृथ्वीराज : चन्द, क्या चाहते हो?

ध्वनि : अपने सम्राट की आँखें खोलना चाहता हूँ। प्रजा में असन्तोष बढ़ रहा है। प्रजा अपने प्रिय सम्राट के दर्शन करना चाहती है।

पृथ्वीराज : हम उसकी इच्छा पूरी करेंगे, किन्तु जब हम परिषद् में आयेंगे तब !

ध्वनि : परिषद् की व्यवस्था हो चुकी है सम्राट।

पृथ्वीराज : बिना हमारी स्वीकृति के परिषद् का आयोजन कैसा !

ध्वनि : संकट के समय राजकाज के प्रति सम्राट की उदासीनता ने मन्त्रि-परिषद् को विवश किया है। (**कुछ रुककर एक साथ कई ध्वनियाँ उठती हैं**) आर्य्यभूमि की रक्षा करो ! सम्राट, बाहर आइये। शत्रु देश पर चढ़ा चला आ रहा है। मातृभूमि की रक्षा करनी है।

पृथ्वीराज : कैसा शत्रु ! अभी तो शत्रु से मुक्ति दिलाई है हमने।

ध्वनि : सम्राट ! सुख के दिन जल्दी निकल जाते हैं। मुहम्मद गोरी आर्य्यभूमि पर फिर बढ़ा चला आ रहा है।

पृथ्वीराज : देखा जायगा। जाओ कवि, हम विश्राम करना चाहते हैं।

ध्वनि : सम्राट की दिल्ली स्वाहा हो जायगी। आमोद-प्रमोद की भी सीमा होती है नृपेन्द्र !

पृथ्वीराज : हमें दिल्ली की चिन्ता नहीं कविराज ! हमें संयोगिता के सुख-विलास की चिन्ता है।

ध्वनि : जो राजा अपने देश की रक्षा नहीं करता वह विद्रोही है, देश-द्रोही है। प्रजा को अधिकार है कि ऐसे राजा का वह वध कर दे। नृपेन्द्र ! शासन के शत्रु को खण्ड-खण्ड कर देती है प्रजा।

पृथ्वीराज : (**सरोष**) कवि चन्द, मालूम होता है तुमने हमारे विरुद्ध विद्रोह खड़ा कर दिया है। हम तुम्हें दण्ड देंगे। चौहान के हाथ में कृपाण है।

ध्वनि : स्वागत करूँगा, राजदण्ड का स्वागत करूँगा।

[पृथ्वीराज अपनी कृपाण लेकर आगे बढ़ना चाहते हैं। संयो-गिता रोकती है]

संयोगिता : आर्य्यपुत्र उधर न जायें, संकट की कल्पना कर उठा है मेरा मन।

पृथ्वीराज : जब तक चौहान के हाथ में कृपाण है उसे संकट से भय नहीं है।

ध्वनि : चौहान-शिरोमणि मति-भ्रष्ट हो चुके हैं। विनाश-काल में बुद्धि विपरीत हो जाती है। हम जाकर शत्रु का द्वार रोकते हैं। चौहान! यदि मातृभूमि के प्रति मोह हो तो युद्धक्षेत्र में आ जाना।

[दूर पर मातृभूमि की जय! आर्य्यभूमि की जय! सुनाई पड़ती है। धीरे-धीरे ध्वनियाँ धीमी पड़ती जाती हैं।]

पृथ्वीराज : समझ में नहीं आता ये युद्ध के बादल हैं अथवा राज-परिषद् के प्रति हमारी उदासीनता के कारण कविराज ने रूपक रचा है। कुछ भी हो संयोगिता, आओ विश्राम करें।

संयोगिता : अच्छा हो, प्राणेश्वर परिषद् में कुछ समय के लिये हो आवें।

पृथ्वीराज : कल की परिषद् में जायेंगे। आओ प्रिये···आज नहीं··· जायँगे।

[दोनों चलकर शयनकक्ष में पहुँचते हैं]

संयोगिता : **(एक पात्र लाकर)** पीजिये आर्य्यपुत्र! थकान दूर हो जायगी।

[संयोगिता पात्र पृथ्वीराज के मुख की ओर बढ़ाती है]

पृथ्वीराज : इस धार में डूब जायेंगे सारे शत्रु !

[शत्रु बढ़ा चला आ रहा है, दिल्ली स्वाहा हो जायगी। प्रजा राजा का वध कर देती है आदि-आदि ध्वनियाँ पृथ्वीराज के मस्तिष्क में गूँजती हैं]

(यवनिका)

दृश्य : दूसरा

स्थान : शहँशाहे-ग़ोर शहाबुद्दीन मुहम्मद ग़ोरी की राज-परिषद्।

समय : मध्याह्न।

[शहाबुद्दीन मुहम्मद ग़ोरी की राजपरिषद् भली भाँति सज्जित है। स्वर्ण और चाँदी के मेल से बना हुआ बहुमूल्य सिंहासन, जिसमें भारत तथा अन्य देशों से लूट में पाये गये मणि-मुक्ता, हीरे-जवाहरात जड़े हुए हैं, खाली दिखाई दे रहा है। सिंहासन के पास सेविकाएँ सिंहासन के दोनों ओर अर्द्धनग्नता धारण किये मयूर-पंख के बने गोलाकार पंखे लिये खड़ी हैं।

परिषद् में उत्साह का वातावरण नहीं है। चारों ओर सन्नाटा-सा छाया हुआ है। अभी शहाबुद्दीन ग़ोरी भी परिषद् में नहीं आये हैं। हाँ, कुछ परिषद्जन आ-आकर अपनी-अपनी जगह पर बैठते जाते हैं। परिषद् का प्रांगण रेशमी कालीनों से ढका हुआ है।

सहसा नेपथ्य से पहरेदार की आवाज़ ऊँचे स्वर में सुनाई पड़ती है। परिषद् में सक्रियता बढ़ती है और धीरे-धीरे शान्त हो जाती है।]

नेपथ्य में : बा-अदब, बा-लिहाज़, होशियार, मसीहुलमुल्क, बन्दा-नवाज़, गरीब-परवर, हुज़ूर बादशाह-सलामत, शहँशाहे ग़ोर शहाबुद्दीन मुहम्मद ग़ोरी तशरीफ़ लाते हैं ! बा-अदब ! बा-लि-हा-ज़ !

[थोड़ी देर में बादशाह मुहम्मद ग़ोरी अपने कुछ प्रमुख
मंत्रियों के साथ दरबार में प्रवेश करते हैं। दरबार
खड़ी होकर कोर्निश करती है। ग़ोरी अपने सिंहासन
पर बैठते हैं। सेविकाएँ मयूर-पंख झलने लगती
हैं। दूसरे सब लोग अपने-अपने स्थान पर
बैठते हैं।]

मुहम्मद ग़ोरी : सरदार कुतुबुद्दीन ऐबक ! उन बातों पर कुछ रोशनी डाली जाय जिसकी वजह से हमने इस दरबार को बुलाया है।

ऐबक : (**झुककर कोर्निश के बाद**) हमने पृथ्वीराज पर पाँच दफा हमला किया, मगर मालूम पड़ता है हमारे दिन अभी फिरे नहीं हैं। जीत का सितारा अभी उसी चौहान की किस्मत में बदा है। हमारे आका को निहायत अफसोस हो रहा है। इसी ग़म ने उनका खाना-पीना हराम कर रखा है। उन्होंने कसम खाई है, जब तक दिल्ली पर ग़ोर का झण्डा न फहरा देंगे, एक वक्त खाना खायेंगे, ज़मीं पर सोयेंगे। जब तक अपनी, अपने मुल्क की बेइज्जती का बदला न ले लें, आका आराम तक न फरमायेंगे। हम (**ऊपर संकेत करके**) उस पाक परवरदिगार का शुक्रिया अदा करते हैं कि वे मौत के चंगुल से बच गये। वरना हम अपने नेक मालिक के दीदारों से महरूम हो जाते। जिन्दगी है तो जहान है, वही हमारा मकसद है। अगर जिन्दगी ही न रहेगी तो जो ख्वाब, जो मकसद हम हासिल करना चाहते हैं, कैसे पूरे होंगे ? उस खूँख्वार भेड़िये की तलवार क्या चलती है मानो आसमान से कहर बरस रहा हो। वे इन्सान नहीं हैं मौत के पुतले हैं। मौत के शिकंजे से बचना आसान नहीं। काफिरों का एक उसूल है कि वे निहत्थे पर हमला नहीं करते और मुआफी

माँग लेने पर मुआफ भी कर देते हैं। गुनाहों की मुआफी तो पाक परवरदिगार भी देते हैं पर वे लोग लड़ाई के मैदान के अलावा दुश्मन के साथ दुश्मनी का सुलूक नहीं करते। एक-एक हिन्दो-स्तानी सिपाही दस-दस गोर-सिपाहियों को चाक कर डालता है। आलम-पनाह ने आप लोगों की मदद से एक बार फिर उस पर जीत हासिल करने का बीड़ा उठाया है।

गोरी : मेरे बहादुर साथियो, आपके सरदार कहने से भूल गये हैं शायद कि उन लोगों से हमारे बिरादर गोर हुसैन को, जब वह लड़ाई के मैदान में आ गया था, मुमकिन है हमारी ही मदद करता, खून देखकर खून खौलता है। हमें यकीन है वह हम पर हमला-वर न होता। दुश्मन के कुछ सिपाहियों ने उन्हें कत्ल कर दिया। उनके एक हजार जाँबाज सिपाहियों के टुकड़े-टुकड़े कर डाले। (**ऐबक तिरछी निगाह से गोरी की तरफ देखता है**) हाँ, कुतुबु-द्दीन ऐबक, अब आगे आप बयान करें।

ऐबक : हमारे मालिक के जिस्म में, उनकी रग-रग पर जख्म हो गये हैं। जब तक वे जख्म भर नहीं जाते नींद कैसी, आराम कैसा? आराम हमारे लिए, (**हाथ घुमाकर**) हम सब के लिए हराम है। हम आराम से बैठ नहीं सकते। साथ ही इस मर्तबा हमारे पास, हमारे खजाने में, सोने के जितने सिक्के थे सब देने पड़े हैं। कुछ सोने के सिक्के आप लोगों से, हमारी रियाया से भी वसूल किये गये हैं, तब छुटकारा मिला है।

गोरी : हम उन लोगों को, जो इस लड़ाई में शहीद हुए हैं, मुबारिक-बाद देते हैं। साथ ही उन लोगों के खानदानों की परवरिश के लिए मदद देंगे। हिन्दुस्तान सोने की चिड़िया है, वहाँ की जमीन सोना उगलती है। वहाँ की लूट से माला-माल हो जाते हैं, क्यों

ऐबक ?

ऐबक : बेशक ! हमारा हर सिपाही हिन्दोस्तान की लूट से माला-माल हो जाता है। जो जिसके हाथ लगता है, बादशाह-सलामत उससे वापस नहीं लेते। इस्लाम का झंडा वहाँ फहराना हम अपना फर्ज समझते हैं और फर्ज के लिये हर एक ग़ोर, चाहे वह सिपाही हो, चाहे सरदार, मर-मिट जायगा। उस मुल्क में हीरे, जवाहरात, सोना और हूरें भरी पड़ी हैं, जिसे जितनी दरकार हो ले आवे। इस्लाम के झंडे को, कौम और वतन के झंडे को ऊंचा उठायें, आसमान में फहरायें तब हम आबाद हो सकते हैं। अपना नाम रौशन कर सकते हैं।

ग़ोरी : शाबास ऐबक ! शाबास !

ऐबक : सुलताने-ग़ोर जिन्दाबाद !

[परिषद् उच्च स्वर से सुलताने-ग़ोर, शहंशाहे-ग़ोर जिन्दाबाद के नारे लगाती है।]

ग़ोरी : एक नारा और बुलन्द करें, इस्लाम जिन्दाबाद !

ऐबक : कहिये आप सब लोग, इस्लाम जिन्दाबाद !

समवेत स्वर : इस्लाम जिन्दाबाद, शहंशाहे-ग़ोर जिन्दाबाद !

ग़ोरी : हम लोग अपने खून का—अपने भाइयों के खून का बदला लेंगे। ऐबक ! इस वक्त हिन्दोस्तान की जमीं पर फूट फैली हुई है। पृथ्वीराज के खिलाफ़ उसी के साथी बग़ावत करने के लिये तैयार हैं। अनहिलवाड़ का भीम हमारा साथ देना चाहता है। कन्नौज का जयचन्द हमें मदद देने का वायदा कर रहा है। जयचन्द चौहानों के गोश्त से चील-कौवों को दावत देना चाहता है।

ऐबक : इन सब बातों के अलावा सबसे बड़ी बात यह भी है कि चौहानों के बड़े-बड़े सिपह-सालार आपस की लड़ाई में मारे गये हैं।

कान्हदेव जयचन्द से जंग करते वक्त मर गया। चामुंडा को कैद कर दिया गया है। कैमास को खुद पृथ्वीराज ने कत्ल कर दिया है। और खुद पृथ्वीराज रासरंग में फँस गया है। जयचन्द की बेटी को अपने महल में क्या ले आया अपनी सुध-बुध खो बैठा है। महानों बीत गये वह हरम से बाहर निकलता ही नहीं। उसकी रियाया उससे खुद बगावत करने पर तुल गई है।

बख्तियार खाँ : (खड़े होकर) कुछ मैं भी अर्ज करना चाहता हूँ।

गोरी : इजाजत है।

बख्तियार खाँ : बन्दा परवर, हिन्दोस्तान की हुकूमतों में भाई भाई का सिर काट डालना चाहता है। मेरा खून खौल रहा है, मेरी तलवार म्यान से बाहर निकलने को तड़प रही है। ताकत हमारे पास मौजूद है, सिर्फ हौसलों की जरूरत है। गजनी से लेकर लाहौर तक हमारी नुमाइन्दा (प्रतिनिधि) सरकार कायम है। एक झटके की जरूरत है, दिल्ली की हुकूमत हिलते ही पूरब तक हमारी फौजें छा जायेंगी।

[बैठता है]

ऐबक : जयचन्द का दूत हमें बुलावा दे रहा है। भीम ने भी कहलाया है कि वह भी चौहान से अपनी हार का बदला लेना चाहता है। सब मिलकर उस पर हमला बोलने को तैयार हैं। जितना सोना हमने चौहान को दिया है, छीन लायेंगे। हमारे सिक्के नायाब तोहफे माने जाते हैं। हम उनके बिना बे-मौत मर चुके हैं, हमारा खजाना खाली हो गया है। खुदा खैर करे, भला हो माधव भट्ट का जिसने अपनी सारी मिल्कियत शाहे गोर के कदमों पर डाल दी है।

[बैठता है]

माधवभट्ट : (**खड़े होकर**) आलम-पनाह गोर मेरा, मेरे बुजुर्गों का देश है। हम काफ़ी अर्से से बादशाहों की जेर-साया में रहते चले आ रहे हैं। अगर सरकार को और भी मदद की ज़रूरत पड़ेगी तो दौलत-मन्द मुल्कों से काफ़ी सोना ला सकता हूँ। हुजूर की मेहरबानी बनी रहे। यह तो आलीजाह खुद जानते हैं कि मेरा काम तिजारत है, अपने मुल्क का माल दूसरे मुल्क में ले आता हूँ तो चार पैसे मिल जाते हैं।

गोरी : हम तुम्हारे अहसानमन्द हैं माधवभट्ट ! बेकार तुम पर ऐब लगाया गया है कि तुम जाली सिक्के बनाते हो। हमें तुम्हारी नेकनीयती पर यकीन है।

माधवभट्ट : (**भाव तथा नेत्रों को चंचल करता हुआ**) हमारे पास बहुत बड़ी दौलत है। क्यों मुनीम जी !

मुनीम : (**उठकर**) हाँ सेठ साहब, दौलत तो आपके इशारे पर नाचती है। वे सिक्के, जिनका ताल्लुक हमसे बताया गया है, (**नेत्र घुमाता हुआ**) दूसरे मुल्क के व्यापारी ढलवाते हैं। हम तो ढलवाई ले लेते हैं।

[**बैठता है**]

गोरी : खैर, कुछ भी हो, शाही खजाने को कोई नुकसान नहीं होता। दुश्मन के मुल्क से जैसे भी हो असली सोना लाओ। नकली हल्का माल वहाँ पहुँचाओ।

माधवभट्ट : अपने मुल्क की खिदमत करना मेरा फर्ज है मेरे मालिक ! आपको जितनी अशरफियों की ज़रूरत होगी, बन्दा हाजिर है।

गोरी : माधवभट्ट ! 'मा-बदौलत' खुश हुए। हम तुम्हें खिताब और इज्जत बख्शेंगे। हाँ, वफ़ादार साथियो, अगर आप यकीन दिलावें तो हम राजा जयचन्द के दूत को जवाब दे दें।

समवेत स्वर : 'आलम-पनाह जिन्दाबाद !' हम सब मर मिटेंगे, अपने देश की इज्जत पर आँच नहीं आने देंगे।

[ऐबक ताली बजाता है। एक सिपाही आता है]

सिपाही : (नतमस्तक) शहँशाहे-गोर जिन्दाबाद ! खुदावन्द तावेदार को क्या हुक्म है ?

ऐबक : धरम परकाश (धर्मप्रकाश) कन्नौज का दूत इन्तजारी में है, उसे अन्दर भेज दो।

सिपाही : (नतमस्तक) जो हुक्म गरीब-परवर !

(सिपाही जाता है, धर्मप्रकाश का प्रवेश)

धर्मप्रकाश : शहँशाहे-गोर जिन्दाबाद ! कान्यकुब्जेश्वर की जय हो।

ऐबक : धरमपरकास (धर्मप्रकाश), आप कन्नौज के दूत ही नहीं हो, हमारे दोस्त भी हो। कन्नौज के राजा साहब ने हमारे मुल्क से दोस्ती का जो हाथ बढ़ाया है उसके लिये हम शुक्रिया अदा करते हैं। मगर आलमपनाह का इरादा हिन्दोस्तान पर अभी हमला करने का नहीं है। जब तक हम अपनी ताकत मजबूत नहीं कर लेते हिन्दोस्तान के खूँख्वार भेड़िये पर हमलावर नहीं होना चाहते। **(तिरछी निगाह से गोरी की ओर देखता है।)**

धर्मप्रकाश : आप ग़लती कर रहे हैं। सरदार, इस वक्त चौहानों की ताकत टूट चुकी है। उसके टुकड़े भी नहीं मिलते। चौहान-नरेश स्वयं घमण्डी हो गये हैं। उनके मन्त्रिगण उनसे खिलाफ होते आ रहे हैं। ऐसा सुनहरी मौका न जाने कब हाथ आयेगा ! आप फौरन सेना लेकर आयें। हम मदद···

गोरी : ऐबक साहब, जब धरमपरकाश (धर्मप्रकाश) यकीन दिलाते हैं कि कन्नौज की सारी सैनिक-ताकत, उधर अनहिलवाड़ की ताकत हमें मिल जाती है तो हमला हमारा करना ठीक रहेगा।

धर्मप्रकाश : इस सचाई में शक नहीं है शाहँशाहे-गोर। दिल्ली की लूट में जो दौलत मिलेगी वह आपकी और दिल्ली कन्नौज की। इसमें हमारा मतलब भी तो छिपा है। हम क्यों नहीं मदद करेंगे।

गोरी : अच्छा दोस्त हमें तुम्हारी दोस्ती मंजूर है।

धर्मप्रकाश : तो मुझे इजाजत है।

ऐबक : अभी कुछ दिन और ठहरते धरमपरकाश (धर्मप्रकाश)! हम अपने दोस्त की कुछ खिदमत ही नहीं कर पाये।

धर्मप्रकाश : सेवक जल्दी से जल्दी कन्नौज पहुंचना चाहता है। हमें तैयारी में लगना है।

गोरी : ठीक, आप जाइये और हमारा इन्तजार कीजिये।

[**अभिवादन के पश्चात् धर्मप्रकाश का प्रस्थान**]

(**यवनिका**)

दृश्य : तीन

स्थान : राजमहिषी संयोगिता के राज-प्रासाद से संलग्न मंत्रणा-कक्ष।

समय : प्रातःकाल।

[महिषी का मंत्रणा कक्ष सुसज्जित है। कक्ष-भवन में दीवारों पर नायिकाभेद सम्बन्धी अनेक तैलचित्र बने हुए हैं। कहीं-कहीं कलापूर्ण भावात्मक नृत्य-मुद्राएं भी अंकित हैं। प्रायः यह कक्ष विशेष अवसरों पर ही उपयोग में लाया जाता है। सम्राट पृथ्वीराज जब संयोगिता के समीप रहते हैं तो यहां कुछ विशेष आकर्षण रहता है किन्तु इन दिनों निष्क्रियता-सी छाई रहती है।

चित्तौड़-नरेश सामन्तसिंह तथा कविराज चन्द द्रुतगति से आकर मंत्रणा-कक्ष के सामने रुक जाते हैं। कुछ यवनी-परिचारिकाएं

आकर्षक मुद्राओं में धनुष तथा तीर लिये इधर-उधर आती-जाती हैं। विस्मयपूर्वक एक परिचारिका चन्द से सविनय निवेदन करती है।]

यवनी : (सविनय) कविराज प्रणाम ! महाराजाधिराज की आज्ञा है।

चन्द : (सरोष) क्या आज्ञा है ? हम सुनना चाहते हैं।

यवनी : (सविनय) महाराज मिलना नहीं चाहते किसी से। उन्हें अवसर नहीं है।

चन्द : (सामन्तसिंह की ओर दृष्टि करते हुए) सुन रहे हैं राव जी ! सम्राट अपने दायित्व को किस प्रकार भूल गये हैं ! इसी भाँति मंत्रिगण आते हैं और लौट जाते हैं। राजकाज से मुख मोड़ लिया है सम्राट ने। **(प्रतिहारी के प्रति)** प्रतिहारी ! महाराज से कहो चन्द आये हैं, मिलकर ही जायेंगे।

यवनी : हठ न कीजिये कविराज ! **(सविनय)** महाराज की घोषणा मालूम नहीं है शायद। **(सदर्प)** कठोर घोषणा है, कविराज !

सामन्तसिंह : हम सुनना चाहते हैं, यवनी ! चित्तौड़-नरेश सामन्तसिंह सुनने के लिये अधीर हो रहे हैं।

यवनी : आ···आप। तो सुनें महाराज सम्राट की आज्ञा है कि जो व्यक्ति हमसे मिलने का आग्रह करे उसे बन्दी-गृह में डलवा दो अथवा बाण से बींध डालो।

चन्द : (सव्यंग) यवनियों के बाण दिल्ली-राज के शुभचिन्तकों के लिये हैं। सम्राट पृथ्वीराज ने····

सामन्तसिंह : (सदर्प) यवनी, जाकर सूचित कर कि चित्तौड़ के सामन्तसिंह यवनी का बाण खाने—वक्षस्थल खोले, प्रतीक्षा कर रहे हैं।

चन्द : एक बार पुष्ट-सा, चन्द भी मरने आया है। **(सरोष)** कहना या तो पृथ्वीराज न होंगे, या हम लोग। जा···जा···

सामन्तसिंह : हमारा निर्णय अटल है,(**सरोष**)जा महाराज से पूछ ले। कहीं हमें ही स्त्री-हत्या का दोष अपने सिर न लेना पड़े।(**कृपाण पर हाथ रखते हैं**)

(सरोष मुद्रा देखकर यवनी भयभीत-सी प्रमदाकक्ष में मुड़-मुड़ कर देखती हुई सवेग जाती है। सामन्तसिंह क्रोधित होते हुए अपनी कृपाण पर बार-बार हाथ रखते हैं।)

चन्द : आइये! चित्तौड़धनी (**संकेत**) मंत्रणा-कक्ष में प्रतीक्षा करें।

(दोनों मंत्रणा-कक्ष में प्रवेश कर बैठ जाते हैं।)

सामन्तसिंह : (**दीवारों की ओर देखकर**) क्षत्रिय विलासिता के रंग में डूब गया। जहाँ वीरों के चित्र, युद्ध-विजयों की रेखाकृतियाँ रहा करती थीं, आज का मंत्रणा-कक्ष नृत्यांगनाओं, कामिनियों और विलास-भावना प्रदर्शित करने वाले चित्रों से सजाया गया है। (**सवर्ष**) कवि चन्द, पराकाष्ठा है विलास-वैभव की।

चन्द : हम लोगों को सम्राट तक पहुँचना दुःसाध्य हो गया है। मृग-नैनियाँ हर कक्ष में, हर द्वार को रोके खड़ी रहती हैं।

सामन्तसिंह : क्या हो गया है पृथ्वीराज को! जिस वीर की भुजा में कृपाणें रहा करती थीं और उनकी कठोरता का अनुभव कर-करके चौहानों की भुजायें फड़क उठती थीं, उन भुजाओं में केवल संयोगिता। ऐसा कौनसा मोहक मंत्र है उसके पास? ऐसा कौनसा वशीकरण-मंत्र पढ़ दिया है उसने चन्दभट्ट? तुम्हारी वाणी का ओज कहाँ चला गया? तुम्हारी वह ललकार कहाँ डूब गई? कवि की वाणी ने सदैव राष्ट्रीयता की रक्षा की है। कवि की वाणी ने सोतों को जगाया है। कवि की हुंकार से हतोत्साहियों ने प्राण पाये हैं, नव-जीवन पाया है। कवि चन्द, तुम्हारी वाणी कहाँ लोप हो-

गई ? **(सरोष)** हुंकार भरो ! हुंकार भरो ! कवि, एक ऐसी हुंकार भरो कि चौहान विलासिता के गर्त्त से निकल आयें ।

चन्द : महाराज, मैंने बहुत प्रयत्न किया है । महाराज मेरी कवितायें सुनकर रीझ जाया करते थे, मेरी कवितायें सुन-सुनकर उन्होंने मैदान मारे थे । युद्ध के पासे पलट जाया करते थे । मेरी वाणी से सैनिक भैरव-नर्त्तन कर उठते थे, किन्तु क्या करूं ! **(नेत्रों में अश्रु)** क्या करूँ रावजी, इन मीनाक्षियों ने मुझे महाराज तक पहुंचने ही नहीं दिया ! एक फूल पर ही न्योछावर हो गये हैं चौहान । अपने मित्र की जुदाई **(रुदन)** मुझ से नहीं सही जा रही है । साथ-साथ रहे, साथ-साथ बढ़े, किन्तु आज चन्द ने अपना साथी—बाल साथी खो दिया है । **(आँसू पोंछते हुए)** नारी का जाल होता ही ऐसा है, महाराज !

सामन्तसिंह : उस दिन महाराज उद्यान में भ्रमण कर रहे थे । संयोगिता महारानी महाराज के साथ थीं । कृणचन्त ने नगर-सम्मानित व्यक्तियों, चुने हुए सामन्तों के कुछ मन्त्रिगणों को लेकर मिलने की इच्छा प्रगट की, किन्तु लाख प्रयत्न करने पर भी प्रवेश न पा सके । मैंने निवेदन करवाया कवि···कवि नहीं, पृथ्वीराज का बाल-साथी अपनी कहानी कहने आया है, कुछ सुनाने आया है, किन्तु रूप-सौन्दर्य के सागर में डूबे महाराज बाहर न आए और न मुझे ही अनुमति मिली । रावजी ! मेरा कवि जाग उठा, जीवन और मरण की चिन्ता न रही, वहीं से ललकारा, किन्तु···किन्तु सामन्तसिंह जी, मुझे फिर भी महाराज के दर्शन न हुए । प्रजा चिल्लाती रह गई । सामन्त लौट गए । मैंने सोचा क्रोधित महाराज मुझे दण्ड देने ही आयेंगे, तभी दर्शन हो जायेंगे । किन्तु···भाग्य ने··· एक नारी ने मेरे मित्र को, आर्य्य-साम्राज्य के वीर-शिरोमणि को

छीन लिया है। (सक्रोध) वह नागिन हम सबके भाग्य को डस रही है। उसकी मोहिनी विद्या को मेरी वाणी ही वश में कर सकती है, किन्तु···उसका प्रभाव तभी होगा जब मेरी ओजस्वी वाणी महाराज के कानों में पड़े।···सामन्तसिंह··· (स्तवन-ध्वनि तीव्र होती है)

[सहसा पृथ्वीराज का प्रवेश, चन्द उठ खड़े होते हैं]

पृथ्वीराज : (विनत होकर) राव सामन्तसिंह जी, प्रणाम ! कैसे आना हुआ ?

सामन्तसिंह : पृथ्वीराज, कैसे आया हूँ, नहीं जानते ! तुम्हारी पृथा का सिंदूर पुछवाने आया था, किन्तु देख रहा हूँ, तुम्हारी कृपाण में वह शक्ति नहीं रही।

पृथ्वीराज : सामन्तसिंह जी !

[चन्द स्तवन करते-करते महाराज के समीप होते हुए]

चन्द : महाराज की जय हो ! इतने दिन बाद दर्शन कर उपकृत हो रहा हूँ।

पृथ्वीराज : कविराज, यह क्या हो रहा है ?

सामन्तसिंह : देख नहीं रहे महाराजाधिराज पृथ्वीराज ! अपने मित्रों को देखिये, कितने दुःखी हो रहे हैं। आर्य्यभूमि पर शत्रु फिर चढ़ आया है। महाराज पृथ्वीराज को पता नहीं है, बहरे कानों में मृदंग की ध्वनि भी नहीं पड़ती। संयोगिता के मधुर वचन सुनते-सुनते भर चुके हैं। देशवासियों की करुण पुकार सुनने के लिए अब जगह कहाँ है उनमें ! महाराज पृथ्वीराज अपनी मर्यादा भी भूल गये। बैठिये, आज निर्णय करना होगा, दिल्ली का राज्यसिंहासन राजकुमार गोविंदसिंह को दे दें या सम्राट पृथ्वीराज अपनी आँखें खोलें। राजधानी में रक्त के फाग की

तैयारी हो चुकी है। चारों ओर अराजकता फैल चुकी है। घर-घर में शत्रु घुस गया है। अपने पराए हो गए हैं और सम्राट को सुध-बुध नहीं रही है। विलासिता की सीमा होती है। सम्राट! सम्राट न रहेगा पृथ्वीराज, ऐसे कर्मों से।

पृथ्वीराज : लज्जित हूँ राव जी! (चन्द से) कविराज चन्द! आओ मेरे गले लग जाओ। मैंने तुम्हें बड़ी व्यथा पहुँचाई है।

[**पृथ्वीराज चन्द को अपने गले से लगाते हैं**]

चन्द : (**रुदनपूर्वक**) महाराज! चन्द को अपनी व्यथा-वेदना की चिन्ता नहीं है। देशभर आर्य्यभूमि पर जो संकट आ गया है उसकी रक्षा चाहता है। कवि अपने सम्राट से देश की आनकी रक्षा चाहता है।

पृथ्वीराज : कवि-मित्र तुम्हारी वाणी का ओज उसकी रक्षा करेगा। जब-जब रणदेवा की हुँकार तुम्हारे पृथ्वीराज ने सुनी है तब-तब वह पीछे नहीं रहा है। किन्तु युद्ध···

सामन्तसिंह : गोरी अब दूर नहीं है। जयचन्द ने देशद्रोहियों में नाम अंकित करा लिया है। शत्रु को अपने घर में ले आना चाहता है। भीम चालुक्य जयचन्द से मिल गया है। इधर घर में ही आग लग चुकी है। सामन्त बिगड़ गये हैं। अकेली संयोगिता को पाने में बारह सौ नरवीरों की बलिदेवी चढ़ी है। आज घर कान्हदेव नहीं रहे। फिर आर्य्य की रक्षा कैसे होगी! चामुण्डराय बन्दीगृह की भित्तियों में जीवन-यापन कर रहा है। आर्य्यभूमि किसकी ओर निहारे! वह अभागिनी हुई जा रही है। यदि आर्य्य-साम्राज्य का पतन हो गया तो महाराज पृथ्वीराज कहाँ रहेंगे? संयोगिता कहाँ रहेगी? पृथ्वीराज, धर्म और संस्कृति की रक्षा करनी है तो कृपाण संभालनी होगी। संयोगिता का मोह त्यागना होगा।

चन्द : महाराज ! इधर आप नारी के ध्यान में हैं, उधर गोरी सम्राट पर आक्रमण करने के ध्यान में है ।

पृथ्वीराज : (दीर्घ निश्वास) चन्द ! राज-धर्म कितना संकटपूर्ण है ! जब प्रजा पर, राष्ट्र पर संकट के मेघ घिरते हैं तो उसे प्रचण्ड झंझा के समान अपना उग्र रूप धारण करना होता है । यह विश्व मानव से त्याग और बलिदान चाहता रहा है । राष्ट्र और समाज की वेदी पर व्यक्तिगत स्वार्थों की बलि देनी पड़ती है ।

सामन्तसिंह : यदि देश सुखी है तो उसका समाज सुखी हो सकता है, अन्यथा यह भी मृत्यु के मुख में घुस जायगा । समाज के लिए आहुतियाँ देनी होती हैं । आर्य्यभूमि की रक्षा के लिए आहुतियाँ देनी हैं । धरती रक्त की माँग कर रही है, रक्त देना होगा । महाराज पृथ्वीराज आर्य्यभूमि का गौरव जिस उत्साह से बनाए रहे हैं उसी प्रकार अब बनाए रखना होगा, अन्यथा इतिहास पुकारेगा, पृथ्वीराज एक नारी के मोह-जाल में ऐसा उलझ गया कि आर्य्यभूमि को शत्रुओं के हाथ में दे गया । मरना-जीना क्षत्रिय के लिए गौण है । देश की रक्षा प्रमुख है ।

चन्द : महाराज की रगों में अभी रक्त विद्यमान है । शत्रुओं को मिट्टी में मिला दो । रणचण्डी का खप्पर भर दो चौहान, शत्रु के दाँत खट्टे कर दो । पराधीनतारूपी नागिन बढ़ी आ रही है उसके दाँत तोड़ दो । अपने घर में ही शत्रु हैं । उनसे संघर्ष लो । आर्य्यभूमि की रक्षा के लिए यदि अपने को ही काटना पड़े तो चूको मत चौहान ।

पृथ्वीराज : रावजी, जब तक पृथ्वीराज के हाथ में भवानी (कृपाण पर हाथ रखते हैं) है, शत्रु हमारी ओर आँख उठाकर नहीं देख सकेगा ।

चन्द : आर्य्यभूमि की ओर समुद्र अपनी विप्लवी धारा से बढ़ रहा है।

पृथ्वीराज : पृथ्वीराज उस धारा को अपनी कृपाण की तीव्र धारा से रोक सकता है।

चन्द : दावानल फैल चुका है, सम्राट !

पृथ्वीराज : कविराज, हुंकार सुनना चाहता है पृथ्वीराज, फिर देखना उस दावानल को बुझाने की शक्ति उसके हाथों में अभी तक वर्तमान है।

चन्द : आर्य्यभूमि के निरभ्र आकाश में भयंकर झंझा उठ रहे हैं।

पृथ्वीराज : उन झंझाओं की गति में मेरी शक्ति अवरोध खड़ा कर देगी। आश्वस्त हों कविराज ! विश्वास रखें रावजी। पृथ्वीराज की रगों का रक्त पानी नहीं हुआ है।

सामन्तसिंह : चामुण्डराय को मुक्त कर दो महाराज ! वह चौहानों में अजोड़ वीर है। हमारी आँखों ने देखा है, एक-एक झपाटे में वह पचास-पचास शत्रुओं का सफाया कर डालता है।

पृथ्वीराज : (सचिन्त) रावजी, चामुण्डराय ने हमारे प्रिय हाथी को मार डाला। राज्य की हानि की है। वह हमें प्राणों से भी अधिक प्रिय था।

सामन्तसिंह : प्रजा के हित के लिये ही उन्होंने ऐसा किया था। चामुण्डराय की देश-भक्ति, स्वामि-भक्ति में अविश्वास कहाँ है ? राजा को प्रजा भी प्रिय होती है, वह उसका पुत्रवत् पालन करता है। हाथी ने प्रजा के कई व्यक्तियों को अकाल मृत्यु के गाल में धकेल दिया था। उसका उन्माद इतना बढ़ा कि महाराज के सैनिक उसे वश में न कर सके, अकेले चामुण्डराय ने उसे पराजित कर दिया। प्रजा का जो अहित हो रहा था वह रुक गया। महाराज चामुण्डराय ने अपनी जान हथेली पर रखकर उससे द्वन्द्व लिया

और आपका नरनाहर चामुण्डराय विजयी हुआ। उसकी सेवाओं का उसे पुरस्कार मिलना था महाराज, किन्तु उसे पैरों में बेड़ियाँ पहननी पड़ीं, उस पर भी उसने मस्तक झुका दिया। राज्य-भक्ति और स्वामि-भक्ति का उदाहरण उपस्थित कर दिया है वीर चामुण्डराय ने। आर्य्यभूमि को उनकी शक्ति की आवश्यकता है महाराज, विचारिये। अब आपके पास हैं ही कौन से वीर ? गिन-गिनकर घाव लगे हैं हमारी छाती पर।

पृथ्वीराज : (उच्च ध्वनि) प्रतिहारी !

[प्रतिहारी का नतमस्तक सवेग प्रवेश]

प्रतिहारी : (नतमस्तक) जाकर दण्डनायक को सूचित करो, चामुण्डराय को हमारे सम्मुख उपस्थित करें।

[नतमस्तक प्रतिहारी का प्रस्थान]

चन्द : सम्राट की जय हो !

पृथ्वीराज : रण-भेरियों के स्वर निनादित हों। हम युद्धभूमि में जायेंगे। शत्रु से लोहा लेंगे। अब की बार चौहान या तो गोरी को वहीं मार गिरायेगा अथवा स्वयं ढेर हो जायगा।

चन्द : आर्य्यभूमि की जय हो !

[उठकर शंखध्वनि फूंकते हैं। समस्त प्रासाद में रण-निनाद ध्वनित होता है, वातावरण में एक साथ उग्रता छा जाती है।]

सामन्तसिंह : हाहुलीराय रूठ बैठा है। जालन्धरराय का कहना है कि पृथ्वीराज के सामन्तों ने उसका अपमान किया है। रूठे को मनाना होगा महाराज !

पृथ्वीराज : रण के साज सजाये जा रहे हैं तो पृथ्वीराज अपने विरोधियों से एक बार विनय अवश्य करेगा। हाहुलीराय हमारे मित्र

रहे हैं, चौहान-कीर्ति-विस्तार में उनका प्रमुख भाग रहा है। नहीं जानता था रावजी के भाग्य इतनी जल्दी हमसे मुंह मोड़ लेगा। किन्तु विधाता के लेख पर स्याही कौन फेर सका है!

[चार सैनिकों के साथ चामुण्डराय का प्रवेश। पैरों में भारी भरकम बेड़ियाँ दिखाई देती हैं।]

चामुण्डराय : **(नतमस्तक)** स्वामी ने कैसे अनुग्रह किया? यह रण-भेरियों की ध्वनि कैसी गूंज रही है?

पृथ्वीराज : वीर-शिरोमणि! चामुण्डराय! राष्ट्र की निधि! **(गद्गद-हृदय)** पृथ्वीराज की अनेक भूलों में एक यह भूल भी सम्मिलित है। आने वाली पीढ़ियाँ पृथ्वीराज के दर्प से उत्पन्न भूलों में इसे भी स्थान देंगी। चामुण्डराय हम तुम्हें मुक्त करते हैं। चामुण्ड-राय स्वतन्त्र हैं।

सामन्तसिंह : बेड़ियाँ खोल दो! वीर का स्वागत हो!

पृथ्वीराज : **(सजल नेत्रों से)** रावजी! सैनिकों को आदेश दे रहे हैं। यह भूल पृथ्वीराज ने की है, आर्य्यभूमि का शासक अपनी भूल सुधारना चाहता है। **(सैनिक के प्रति)** लाओ कुंजी! सामन्त की, आर्य्यभूमि की निधि की बेड़ी सम्राट स्वयं हटायेगा।

[कुंजी लेकर पृथ्वीराज बेड़ी खोलने को उद्यत होते हैं कि नेत्रों से अविरल अश्रुधारा बहती है। चामुण्डराय के पैरों पर अश्रु गिरते हैं।]

चामुण्डराय : क्षमा क्षमा महाराज! आर्य्य-गौरव क्षमा! इतना गिरा हुआ न समझें चामुण्ड को। आर्य्यभूमि पर संकट आ गया है, बन्दीगृह में यदि प्राण निकल जाते तो कोई नहीं जानता, किन्तु अब चामुण्ड युद्धभूमि में मरेगा और यदि जीवित रहा तो यह मस्तक फिर सम्राट के ही काम आयेगा।

सामंतसिंह : देख रहे हो चामुण्डराय, महाराज की भूल आँसू बनकर बह गई है।

चामुण्डराय : सम्राट की कोई भूल नहीं है, भूलें शासित ही कर बैठते हैं। क्षमा मेरे प्रभु, क्षमा! आर्य्य-सम्राट को कोई यह न कहे कि देश पर, मातृभूमि पर संकट था इसलिए सम्राट पृथ्वीराज ने चामुण्ड को क्षमा किया। किन्तु पीढ़ियाँ याद रखें सेवक का गौरव स्वामिधर्म में ही है। आर्य्य-सम्राट के नेत्रों के अश्रु मेरे अंग पर गिरे हैं। चामुण्ड जीवित रहते उनका ऋणी रहेगा। एक-एक अश्रु का ऋण चुकायेगा, अपने शोणित से——अपने जीवन की एक-एक श्वास से। आर्य्य-सम्राट की जय! मातृभूमि की जय।

[**गद्‌गद् पृथ्वीराज चामुण्डराय को अपनी छाती से लगाते हैं**]

सामन्तसिंह : अब हाहुलीराय के पास कौन जायगा? उसे सही मार्ग पर लाना है।

चन्द : वह शत्रु के गीत गा रहा है, उसके आलाप में देशद्रोह का राग सुनाई दे रहा है महाराज!

पृथ्वीराज : यदि सामन्तसिंह जी अनुचित न मानें तो मैं ही चला जाऊँ। रूठे सामन्त को मैं ही मना लाऊँ।

चामुण्डराय : हाहुलीराय हमारा माण्डलिक सामन्त है। इस समय वह शत्रु के प्रभाव में है। सम्राट का जाना मर्यादा के विपरीत तो है ही, साथ ही राजनीति के प्रतिकूल भी। राजदूत भेजना ठीक रहेगा।

पृथ्वीराज : राजदूत! तब यह कार्य सिवाय कविराज के दूसरा सम्पन्न नहीं कर सकता।

चन्द : हाँ, मैं जाऊँगा, सुबह का भूला शाम को घर आ जाय तो भूला नहीं कहा जाता। मैं उसे समझाऊँगा, उसे स्वामि-धर्म का स्मरण

कराऊँगा ।

[सहसा जल्हन का प्रवेश]

चन्द : आओ जल्हन ! कृणवन्त कहाँ हैं ?

जल्हन : (नतमस्तक) सम्राट की जय हो ! रण-सज्जा की आ रही है। सभी जगह समाचार भेज दिये गये हैं। कृणवन्तराय आवश्यक योजनाओं में संलग्न हैं।

पृथ्वीराज : शुभ हो ! (उच्च स्वर) प्रतिहारी !

[नतमस्तक प्रतिहारी का प्रवेश]

प्रतिहारी : आर्य्य-सम्राट की जय हो !

[नतमस्तक प्रतीक्षा करती है]

पृथ्वीराज : हमारे वस्त्राभूषण तथा रण-सज्जा की सामग्री यहीं ले आओ। हमें युद्ध के लिए प्रस्तुत होना है।

चन्द : सम्राट महारानी संयोगिता से विदा ले आवें।

पृथ्वीराज : कविराज ! आर्य्यभूमि पर संकट आ गया है। संयोगिता विलास-भवन में है। युद्ध के बादल मँडराते हों तो क्षत्रिय का विलास-कक्ष में प्रवेश करना ही अधर्म है, राष्ट्र के प्रति विश्वास-घात है।

[सहसा संयोगिता का प्रवेश, साथ में कुछ परिचारिकायें]

संयोगिता : यथार्थ है आर्य्यपुत्र ! मातृभूमि के संकट के समय क्षत्रिय-वीर रास-रंग भूल जाते हैं।

[सहसा सामन्तसिंह खड़े हो जाते हैं]

सामन्तसिंह : राजरानी संयोगिता !

संयोगिता : अपने कर्त्तव्य से विमुख कब हुई है संयोगिता चित्तौड़वनी ? संयोगिता ने स्वामी की इच्छा के विपरीत कभी चलना उचित नहीं समझा है। क्षत्राणी आ पहुँची है अपना कर्त्तव्य निभाने।

रण-सज्जा से अपने पति को क्षत्राणी सज्जित करेगी। मंगल-आरती उतारेगी। और फिर संयोगिता ने भी अश्व की पीठ पर चढ़ना सीखा है। वह कृपाण चलाना भी जानती है। युद्धभूमि में···

चन्द : राजरानी !

संयोगिता : विस्मय हुआ राजकवि !

चन्द : नहीं, क्षत्राणी नहीं। हमारी मर्यादा का प्रश्न है, पुरुष युद्ध-भूमि में जाते रहे हैं और नारी··· (**वाणी रुक जाती है**)

संयोगिता : संयोगिता नई परम्परा डालना चाहती है। क्या भारत की साम्राज्ञी का युद्धभूमि में जाना वर्जित है ? कहीं वर्णन किया है कवि ने ? ठीक है, महारानी हैं संयोगिता···उप-साम्राज्ञी ही सही, कहीं निषेध है, आर्य्य ! सामन्त-शिरोमणि ! आप बताइये। चित्तौड़धनी आप बताइये। जब नारी पुरुष के सुख में, वैभव में सम्मलित है तो दुःख में साथ न देगी ? क्षत्राणी ने मरना सीखा है। आर्य्यपुत्र ! भुजायें केवल पुष्प-मालाएँ पहनाने तक ही सीमित न रहें, उन्हें खड्ग-संचालन के लिए भी तैयार रहने दें।

[**संयोगिता पृथ्वीराज को रण-सज्जा से सज्जित करती है। नेपथ्य में रण-भेरियों की ध्वनि तीव्र होती है**]

चन्द : धन्य है भारत की क्षत्राणी। आर्य्यभूमि तेरी ऋणी है। (**जल्हन के प्रति**) जल्हन, तुम भी युद्ध-भूमि में जा रहे हो ?

जल्हन : हाँ, पिताजी। कविपुत्र हूँ, रणवीर भी। पिता की मर्यादा-परम्परा का निर्वाह करना मेरा कर्तव्य है। यह आर्य्यभूमि की पुकार है, मेरे कानों ने भी सुनी है वह।

चन्द : मेरा एक कार्य अधूरा रहा जाता है। सम्भव है मैंने युद्ध में वीरगति पाई तो···

जल्हन : आदेश ! पिताजी आदेश !

चन्द : कवि जल्हन, पृथ्वीराज… **(वाणी रुकती है)**

जल्हन : आज्ञा करें पिताजी ! पालन होगा।

पृथ्वीराज : कविराज ! जल्हन को युद्धभूमि में न ले जायें तो अच्छा है।

चन्द : मेरा यह अभिप्राय नहीं है श्रीमान् ! दो पुत्र चौहान की सेवायें करते-करते वीरगति को प्राप्त हो चुके हैं, सम्राट ! यदि मेरे सौ पुत्र हों तो सभी को यही कहूँगा कि स्वामि-धर्म में ही जीवन उत्सर्ग कर देना। पर जल्हन को एक महान् कार्य सौंपना चाहता हूँ सम्राट ! **(जल्हन के प्रति)** जल्हन, चन्द पिता के नाते तुमसे कुछ नहीं कह रहा। उस नाते उसका न कोई आदेश है और न अनुरोध। एक कवि के नाते चौहान-सम्राट की गौरव गाथाएँ गाते-गाते चन्द ने अपना जीवन व्यतीत किया है। स्वामी को सावधान भी किया है, हास्य, उपहास और मनोरंजन भी किया है। जो भी सेवाएं आ पड़ी हैं उनसे पीछे नहीं हटा हूँ। कवि चन्दबरदायी अपनी मातृभूमि के लाड़ले कवि से अनुरोध कर रहा है, उस अनुरोध की रक्षा हो वत्स कवि !

जल्हन : **(उत्सुकतापूर्वक)** आदेश का पालन होगा कविराज !

चन्द : **(गद्गद होते हुए)** यदि कवि चन्द न लौटे, तो 'पृथ्वीराज रासो' को सम्पूर्ण करना… **(धीमी ध्वनि)** …'पृथ्वीराज रासो'…पृथ्वी-राज…रा…सो। **(सावेश)** कवि कवि की आत्मा को जानता है, उसकी परम्परा को निवाहना भी जानता है। आज तक की घटनायें उसमें वर्णित हैं, अब आगे तुम्हारी कवि-वाणी अंकित होगी।

जल्हन : **(नतमस्तक)** कवि जल्हन उस मर्यादा की रक्षा करेगा।

उत्तराधिकार का जो वरदान मिल रहा है उस पर, कवि की आत्मा पर, आँच न आने देगा कवि।

चन्द : दीर्घायु हो वत्स कवि ! आर्य्य-सम्राट और आर्य्यभूमि के गौरव की रक्षा कर सको, यही मंगल कामनायें हैं। (**भाव, विभोर**) कवि ···कवि जल्हण !

सामन्तसिंह : कवि चन्द वरदायी की सेवायें चौहान-इतिहास के साथ-साथ स्मरण की जायेंगी।

[**नेपथ्य में रणभेरियों का घोष**]

चन्द : सम्राट, मैं चलता हूँ। जालंधर पहुँचना अनिवार्य हो गया है।

पृथ्वीराज : हाहुलीराय ने विगत समय में चौहानों की कीर्ति प्रस्तारित की है, उन्हें स्मरण करा देना।

[**नतमस्तक प्रस्थान**]

पृथ्वीराज : सामन्तसिंह जी ! अब हमें युद्ध-शिविरों की व्यवस्था करनी चाहिये। संयोगिता, हम तुम्हें युद्धभूमि में नहीं ले जा सकते। युद्धभूमि में तुम्हारे पिता भी होंगे जो हमारे विरोधी पक्ष में होंगे। सम्भव है वे कहें, चौहान रणक्षेत्र में स्त्रियों को उतार लाये हैं। चौहानकुल की मर्यादा पर कलंक लग जायगा।

संयोगिता : आर्य्यपुत्र ! दासी को साथ ही चलने दें। यदि मेरे पिता वहाँ होंगे तो उनसे दो-दो बातें कर तो सकूँगी कि अपनी माता जन्म-भूमि की छाती पर आघात कर रहे हैं। देशद्रोह भयानक पाप है। मातृभूमि के लिये वे कलंक हैं। (**भावावेश**) आर्य्यपुत्र, मैं जाऊँगी !

सामन्तसिंह : चलो चामुण्डराय। जल्हन, आओ, हमें अपनी व्यवस्था में संलग्न होना है।

[**सबका प्रस्थान**]

पृथ्वीराज : (**गम्भीरतापूर्वक**) संयोगिता, अपने पति के आदेश का पालन करो ।

संयोगिता : संयोगिता अपने सम्राट से—भारतसम्राट से आज्ञा चाहती हूं, उसे रणभूमि में जाने का अवसर दिया जाय ।

पृथ्वीराज : पृथ्वीराज—सम्राट की यही आज्ञा है कि कुल-वधुएँ घर में ही रहें । अपने कर्त्तव्य-धर्म का पालन करें । वीर पुरुषों की कमी नहीं है ।

संयोगिता : (**सविस्मय-सकरुणा**) कर्त्तव्य···ध···र्म···को···पालन करूँगी ! आर्य्यपुत्र की मंगल-कामना में तन्मय हो जाऊँगी। व्रत-उपासना से परम प्रभु को राजी रखूंगी, अपने सौभाग्य की कामना करूंगी ।

[**संयोगिता एक परिचारिका से कुंकुमपात्र लेकर कुंकुम तथा अक्षत पृथ्वीराज के भाल पर लगाती है । तदनन्तर आरती उतारती है ।**]

पृथ्वीराज : संयोगिते ! युद्धभूमि से लौटने पर···

[**सहसा आरती-पात्र गिर जाता है सहमी हुई परिचारिकायें उठाती हैं ।**]

संयोगिता : आर्य्यपुत्र ! यह···(**सविस्मय विषादपूर्ण मुद्रा**)

पृथ्वीराज : वियोग की पराकाष्ठा है आर्य्ये ! शंकित न हो संयोगिते···

[**प्रस्थानोद्यत संयोगिता की अञ्जलि अपनी अञ्जलि में लेकर**]

राजधर्म का निर्वाह प्रमुख है···संयोगिते···(**सव्यथा**) संयोगिता, मातृभूमि के प्रति कर्त्तव्य सर्वोपरि है ।

संयोगिता : आर्य्यपुत्र, क्षत्राणी भी अपना कर्त्तव्य जानती है । विजय

के बाद···क्षत्राणी! आर्यपुत्र के···

पृथ्वीराज : (सहास्य, सव्यथा) और यदि पराजय···

[संयोगिता पृथ्वीराज के मुख पर शीघ्रतापूर्वक अंगुलियाँ रख देती है···]

संयोगिता : चन्दनकाष्ठ की राज-प्रासाद में कमी नहीं है आर्यपुत्र!
(नेत्रों में आँसू)

[नेपथ्य में रणभेरियाँ तीव्र ध्वनियाँ कर उठती हैं पृथ्वी-राज का सवेग प्रस्थान। हाथ बढ़ाये संयोगिता अवाक् खड़ी रह जाती है]

(यवनिका)

दृश्य : चार

स्थान : तराइन की विस्तृत शिविर-भूमि।

समय : प्रभात।

[तराइन की लम्बी-चौड़ी शिविर-भूमि के पश्चिमोत्तर भाग में एक ओर शहाबुद्दीन मुहम्मद गोरी की पदाति तथा अश्वारोही असंख्य सेना पड़ी है। अनेक शिविरों में सतर्कता दिखाई देती है। सैनिकगण अपने भाले, धनुष-बाण, तलवारें संभाल-संभाल कर एक दूसरे के सहारे रख रहे हैं। यदा-कदा पशुओं के स्वर एक साथ उठते हैं और शान्त होते हैं।

पूर्व की ओर थोड़ी-थोड़ी दूर पर राठौर-ध्वज दिखाई दे रहे हैं। अनुमान होता है, कान्यकुब्जेश्वर जयचन्द के शिविर यही हैं। उन शिविरों से कुछ दूर जालन्धरराज हमीर हाहुलीराय के शिविर हैं। जय-चन्द के शिविर की ओर से कुछ व्यक्ति हाहुलीराय के शिविरों की ओर आते ˝ तो कभी हाहुलीराय के शिविरों से कुछ सामन्तगण उस

ओर आते हैं। कभी-कभी दूर पर सैनिकों को समझाते हुए हाहुलीराय दृष्टि पड़ जाते हैं। कुछ सैनिकों से घिरे कविराज चन्द रवयाई दिखाई देते हैं। अपने स्थान से हाहुलीराय कुछ आगे आते हैं और कविराज उस ओर बढ़ रहे हैं। थोड़े ही समय में दोनों व्यक्ति एक स्थान पर, (हाहुलीराय का शिविर) रुकते हैं।)

हाहुलीराय : (सविस्मय) कविराज चन्द ! पधारिये ! कैसे भाग पड़े इस ओर ?

चन्द : (अभिवादन करके) जालंधरराय ! चौहान-परिषद् के सामन्तों की ओर से अभिवादन स्वीकार हो।

हाहुलीराय : (सदर्प) कविराज बड़ी देर से आये ! हम तो आशा लगाये बैठे थे कि आप बहुत पहले ही आयेंगे।

चन्द : आना तो था किन्तु परिस्थितियाँ कुछ ऐसी बन गई हाहुलीराय ! यह क्या हो रहा है ? नरेन्द्र ने शत्रु के शिखरों के साथ अपने शिविर लगा दिये हैं। जयचन्द राठौर के सम्बन्ध में तो सुन चुके थे कि वे शाह की सहायता करेंगे। इस बार शाह को उन्हीं ने निमंत्रण भी दिया है। हमीरराय, आश्चर्य हो रहा है आपके शिविर यहाँ देखकर।

हाहुलीराय : (हंसकर) आश्चर्य कैसा कविराज ! **(भौं तरेर कर)** आश्चर्य उस दिन नहीं हुआ था जब पृथ्वीराज की परिषद् में हमारा अपमान किया था जयंत परमार ने हमें विश्वासघाती की संज्ञा दी थी। उस दावाग्नि से हमारा हृदय संतप्त हो उठा था। राजनीति की चर्चा करते समय पक्ष-विपक्ष दोनों की चर्चा होती है, कभी विपक्ष का समर्थन भी करना पड़ता है। किन्तु इसका अभिप्राय यह नहीं कि समर्थक विश्वासघात कर रहा है। फिर चौहान के वाक्यों ने उस दावाग्नि में वायु का काम किया है,

चन्दभट्ट, आज आँखें खुली हैं उनकी। अपने दर्प में सामन्तों को भुला दिया है।

चन्द : नरेन्द्र पृथ्वीराज की आँखें खुली नहीं, खोली गई हैं। चित्तोड़-धनी सामन्तसिंह ने आड़े हाथों लिया तब जाकर वे युद्ध के लिये प्रस्तुत हुए हैं।

हाहुलीराय : कविराज, जयत परमार सरीखे सामन्तों ने ही तो यह स्थिति पैदा कर दी कि युद्ध की घड़ी आ गई। परमार की नीति से चौहान सामन्तों में विक्षुब्धता उत्पन्न हो गई थी। इसी नीति से तो ग़ोरी को बल मिला है।

चन्द : उन अपयश की बातों को भुला दो नरेन्द्र ! माँ के वक्ष पर कुठाराघात होते देखोगे ? स्वामि-धर्म क्षत्रिय के लिये महत्त्वपूर्ण रहा है, उसी पर चलो हमीरराय ! जिस पथ पर अब तक चलते आये उसे भुलाकर दूसरा मार्ग ग्रहण करोगे ? जीवन कलंकित करने जा रहे हो—वह मार्ग कलंक का मार्ग है। यदि हाहुलीराय जीत भी गये तो भी यश नहीं मिल सकता, यहाँ हार में यश मिलेगा। संसार कहेगा, वीरों ने अपनी संस्कृति की रक्षा के लिये, मातृभूमि के गौरव को अक्षुण्ण बनाये रखने के लिये अपना बलि-दान कर दिया। वहाँ मिलेगा अपयश—संसार की आने वाली संतति कहेगी स्वर्ण के लोभ में, पद के मोह में हाहुलीराय जैसे देशभक्त शत्रु के कुचक्र में फँस गये। आज का सुख थोड़े समय का है। क्या ग़ोरी-इतिहास के स्वर्णिम पृष्ठों में अपना नाम, अपने देश का नाम, कलंकितों में लिखवाना चाहते हो ? हमीर, सोचिये। सम्राट ने कहा है, हाहुलीराय युद्ध की बागडोर सँभालें।

हाहुलीराय : अब हमारे लिये अपना विचार बदलना सम्भव नहीं है। युद्ध की वेला आ पहुँची है। शाहे ग़ोर का दूत पृथ्वीराज के पास

पहुँच चुका है। युद्ध अवश्यम्भावी है।

चन्द : यह कौन अस्वीकार करेगा कि युद्ध न होगा! वह तो अवश्यम्भावी है।

हाहुलीराय : तो हाहुलीराय का युद्ध में सम्मिलित होना भी अवश्यम्भावी है। गोरी ने हम पर विश्वास किया है, जयचन्द की शक्ति पर विश्वास किया है। सम्भव है चालुक्यराज की भी शक्ति सम्मिलित हो जाय। कविराज, पृथ्वीराज के दिन फिर गये हैं।

चन्द : पृथ्वीराज के भाग्य को क्यों कोस रहे हो? भारत का भाग्य ही ऐसा है, यह कहिये। किन्तु हमीरराय, यह जान लें, दिल्ली के आसपास हाथी, घोड़े और पैदल बढ़े चले आ रहे हैं। माण्डलिक राजागण दूने-चौगुने उत्साह से एकत्रित हो रहे हैं, रणोत्साह फूटा पड़ रहा है। सम्राट पृथ्वीराज युद्ध का अध्यक्षपद हाहुलीराय को दे रहे हैं, विजय-कीर्ति जालन्धरराय के पैर चूमने को उत्सुक है।

हाहुलीराय : कवि-शिरोमणि एक प्रस्ताव है, यदि पृथ्वीराज स्वीकार कर लें तो सम्भव है युद्ध की घड़ी टल जाय।

चन्द : सुनना तो चाहूँगा।

हाहुलीराय : कवि चन्द, पंचनद देश के दो भाग बराबरी के कर लिये जायें। शाह गोरी समर्थ है, उधर पृथ्वीराज भी समर्थ हैं। दो शक्तियों का परस्पर टकराना भविष्य में मिट जायगा। ऐसा कर सम्राट पृथ्वीराज सुख-भोगों का आनन्द लेते रहेंगे।

चन्द : (**सदर्प**) हाहुलीराय! आर्य्यभूमि के टुकड़े कराना चाहते हो? विदेशियों को अपनी मातृभूमि का अंग काटकर भेंट कर देना चाहते हो? (**सरोष**) माता के टुकड़े होते देख सकोगे? नहीं जानता था, हमारे सामन्त का हृदय इतना काला हो गया है। जो विश्वासघाती का कलंक उस दिन चौहान-परिषद् ने तुम्हारे ऊपर लगाया

था तो...सो वह...आज...सत्य होता दीख रहा है। (सरोष) हम पृथ्वीराज को ऐसा मंत्र देने से पूर्व मृत्यु का आलिंगन करना श्रेयस्कर समझेंगे।

हाहुलीराय : क्रोध न करो कविवर! अपने सम्राट से पूछ तो लो। हमारा परामर्श सुख देने वाला है, आये दिन होने वाले युद्धों से मुक्ति मिल जायगी। शान्तिपूर्वक सांसारिक सुखों का भोग भोगेंगे पृथ्वीराज।

चन्द : सांसारिक सुखों की कल्पना युद्धकाल में कायर और पंगु करते हैं। संकट के समय सुखों को तिलाञ्जलि दे दी जाती है जालंधरराय! ऐसा अनुमान करता हूँ कि शाह गोरी ने जालंधर-धनी को खरीद लिया है। उसके सोने की चमक से आँखें चौंधिया गई हैं, बुद्धि में उन्माद आ गया है।

हाहुलीराय : हमने तो दिल्लीश्वर के भले के लिये कहा है। कवि ने शाह की शक्ति का अनुमान नहीं लगाया है। साथ ही यह भी कहना होगा कि अपनी कमजोरी की भी कल्पना नहीं कर पाये हैं कविराज! चौहान के जीवन में अन्धकार छाने वाला है, घोर अन्धकार।

चन्द : जब घर को घर का चिराग ही जलाने चला है तो अन्धकार न होगा तो क्या प्रकाश होगा, किन्तु क्षत्रिय-सम्राट को शिथिल-शक्ति न समझो। उसमें अब भी इतनी शक्ति है कि वह आकाश को पृथ्वी की ओर झुका सकती है। पृथ्वीराज कलंक न लगावेंगे अपने यश को। इससे तो उचित होगा कि मर मिटें वे। जालंधरराय, एक बार फिर विचार करें। यश-प्राप्त करना सरल नहीं है, मर्यादा-पुरुषोत्तम श्रीराम ने यश-प्राप्ति के लिये अपने पिता की आज्ञा मानी, राज्य छोड़ा। दधीचि ऋषि ने अपना मांस तक काटकर

दान दे डाला। हरिश्चन्द्र ने स्वप्न में ही समस्त राज्य दान कर दिया, उनका यश आज भी विद्यमान है।

हाहुलीराय : चन्द, किस यश की बात कहते हो? मनुष्य वही है जो परिस्थितियों के अनुसार चलता है। इस समय भारत की—आर्य्यावर्त्त की परिस्थितियां कुछ ऐसी ही हैं। मेरे मंत्र से आर्य्य-भूमि का उद्धार है और हम सबका भी। रक्त का फाग खेला जाने को है। वह रुक सकता है। आकाश टूट पड़ना चाहता है, उसमें एक अवरोध खड़ा हो जायगा। पृथ्वीराज के शत्रु मुँह ताकते रह जायेंगे। उनके मुँह का पानी उतर जायगा जब वे शाह और चौहान का सन्धिपत्र देखेंगे। चन्दवरदाई स्वयं विज्ञ हैं। मैंने कुछ अनुचित नहीं कहा है।

चन्द : कुछ भी हो, इस प्रस्ताव से यदि सम्राट सहमत भी हों तो कवि में वह शक्ति है कि उसके विरुद्ध जनमत खड़ा कर दे। फिर स्वयं सम्राट अपनी मातृभूमि की रक्षा करते आ रहे हैं, उस अर्जित कीर्ति को मिटा न देंगे। पृथ्वीराज में गिरते हुए आकाश को थामने की शक्ति है हमीर! उनकी भुजाओं में वह पराक्रम है कि सरिता का प्रवाह मोड़ दे। उनका कोधानल समुद्र के जल को पीने की क्षमता रखता है। हमीर! हम तुम्हें अपने पक्ष में न कर सके, न सही। पृथ्वीराज का भविष्य उज्ज्वल न हो, न सही, किन्तु वरदाई का कथन सामने आयेगा। जालंधरराय इस काल्पनिक सुख-वैभव को भोगने के लिए जीवित न रहेंगे। इतिहास देशद्रोही के नाम से पुकारेगा।

हाहुलीराय : यह तो समय बतायेगा। इन झूठी दर्पोक्तियों से हमीर भय खाने वाला नहीं है।

[सहसा चन्द उठ खड़े होते हैं। नेपथ्य में गम्भीर रण-भेरियाँ बज उठती हैं। एक ओर से 'शहंशाहे गोर, शहाबुद्दीन गोरी ज़िन्दाबाद' का नारा सुनाई देता है तो दूसरी ओर 'हरहर महादेव !' 'आर्य्य भूमि की जय!' 'आर्य्य सम्राट की जय!' सुनाई पड़ती है]

चन्द : अब युद्ध के लिए सन्नद्ध हो जाओ हाहुलीराय !

[नेपथ्य में मारो ! मारो ! पकड़ो ! पकड़ो की ध्वनि]

हाहुलीराय : युद्ध छिड़ चुका है। आओ पहले हमसे ही निबटते जाओ।

चन्द : प्रस्तुत हूँ ! हमीर, मेरे ये दस वीर ही तुम्हारा मद-मर्दन करने के लिए पर्याप्त हैं। हर हर महादेव !

[चन्द और हाहुलीराय संघर्ष करते हैं। चन्द के साथ आये हुए सेनानी मार-काट मचा देते हैं। हाहुलीराय के सिपाही भी आ जाते हैं। चन्द एक घूंसा तानकर हाहुलीराय की छाती पर जमाते हैं। वह गिरता है। चन्द निकल जाने में समर्थ होते हैं। युद्ध चलता रहता है। चन्द अपने कुछ साथियों सहित चौहान-शिविर में पहुँच जाते हैं। युद्ध भयानक रूप धारण कर लेता है। पृथ्वीराज, सामन्तसिंह, चामुण्डराय और चन्द एक ओर हैं तो दूसरी ओर गोरी, हाहुलीराय और जयचन्द दिखाई पड़ते हैं। युद्ध का कोलाहल हो रहा है। युद्ध की तीव्रता, भयंकरता, बीभत्सता बढ़ रही है। नेपथ्य में कराह की ध्वनियाँ सुनाई पड़ रही हैं। चामुण्डराय, पृथ्वीराज, सामन्तसिंह, चन्दबरदाई एक ही स्थान पर धनुष-बाण लिए खड़े दिखाई दे रहे हैं। चामुण्डराय घोर गर्जन कर शत्रु-सैनिकों को युद्ध के लिए ललकार रहे हैं। सहसा उनकी दृष्टि शहाबुद्दीन गोरी पर पड़ती है।]

चामुण्डराय : आर्य्य-सम्राट की जय हो। शाह सामने खड़े हैं। उनके

साथ····

चन्द : देख रहे हैं आर्य्य वीर ?

पृथ्वीराज : गोरी अपने सैनिकों को उत्साहित कर रहा है।

चामुण्डराय : एक ही बाण से काम तमाम हुआ जाता है। (बाण खींचता है।)

पृथ्वीराज : ठहरो चामुण्डराय ! यह तो हमारा···लो वह हट गया सामने से। हाहुलीराय पर छोड़ो यह बाण। किन्तु वह इस ओर से असावधान है।

चामुण्डराय : सावधान भी किये देता हूँ।

[कान तक खींचकर बाण छोड़ते हैं। बाण उसके पास गिरता है, वह सामने देखता है, उसे तीनों वीर दिखाई देते हैं। वह अपना बाण इस ओर छोड़ता है, बाण पृथ्वीराज की ओर आता है। सामन्तसिंह उसे अपनी ढाल पर रोक लेते हैं। इधर चामुण्डराय दूसरा बाण पूरे वेग से छोड़ते हैं। हाहुलीराय उसे बचा नहीं पाते। मस्तक पर चोट करता है और वह धराशायी हो जाता है। चारों ओर कुहराम मच जाता है। पृथ्वीराज दूसरा बाण छोड़ते हैं, जयचन्द उसे अपने ऊपर आता समझ वहाँ से हट जाता है। वह दिखाई भी नहीं देता अब।

युद्ध का कोलाहल बढ़ रहा है। दोनों पक्षों में जय-ध्वनियाँ उठ रही हैं। लड़ते-लड़ते गोरी और ऐबक बढ़ते चले आ रहे हैं। इधर सामन्तसिंह और पृथ्वीराज बढ़ते हैं। चन्दभट्ट अलग मार-काट मचा रहे हैं।

पृथ्वीराज और गोरी का द्वन्द्व देखते ही बनता है। पृथ्वीराज ने एक लात का प्रहार किया उस पर, वह गिर गया। फिर उठा। उसने भाला सँभाला। पृथ्वीराज भाले से युद्ध करने

लगे। चन्द भी निकट आ गये। अब दोनों दृष्टि नहीं पड़ते। सहसा नेपथ्य में ध्वनित होता है—]

नेपथ्य में : आर्य्य-सम्राट कीर्तिशेष हो गये। चन्दवरदाई भी धरा-शायी हो गये। सम्राट की मृत्यु देखकर उनके वियोग में हृदय विदीर्ण हो गया।

[मारो-काटो की ध्वनियां तीव्रतर होती जाती हैं। चारों ओर भगदड़ मच जाती है।]

[यवनिका]

समाप्त